ISSN 2394-8485

ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

आश्विन-कार्तिक, संवत् नानकशाही ५४७
वर्ष ९ अंक २ अक्तूबर 2015

संपादक : सिमरजीत सिंघ

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-60
एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग 303 संपादकीय विभाग 304

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

Final

गुरबाणी विचार

हमरै मनि चिति हरि आस नित किउ देखा हरि दरसु तुमारा ॥
जिनि प्रीति लाई सो जाणता हमरै मनि चिति हरि बहुतु पिआरा ॥
हउ कुरबानी गुर आपणे जिन विछुड़िआ मेलिआ मेरा सिरजनहारा ॥१॥
मेरे राम हम पापी सरणि परे हरि दुआरि ॥
मतु निरगुण हम मेलै कबहूं अपुनी किरपा धारि ॥१॥रहाउ॥
हमरे अवगुण बहुतु बहुतु है बहु बार बार हरि गणत न आवै ॥
तूं गुणवंता हरि हरि दइआलु हरि आपे बखसि लैहि हरि भावै ॥
हम अपराधी राखे गुर संगती उपदेसु दीओ हरि नामु छडावै ॥२॥
हमरे गुण किआ कहा मेरे सतिगुरा जब गुरु बोलह तब बिसमु होइ जाइ ॥
हम जैसे अपराधी अवरु कोई राखै जैसे हम सतिगुरि राखि लीए छडाइ ॥
तूं गुरु पिता तूंहै गुरु माता तूं गुरु बंधपु मेरा सखा सखाइ ॥३॥
जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥
हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता गुर सतिगुर संगि कीरे हम थापे ॥
धंनु धंनु गुरू नानक जन केरा जितु मिलिऐ चूके सभि सोग संतापे ॥४॥ *(पन्ना १६७)*

चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी राग गउड़ी बैरागणि में अंकित इस पावन शबद में स्वयं को सेवक/जिज्ञासु के रूप में परामत्मा को संबोधित करते हुए कथन करते हैं कि हे मालिक! मेरे मन-अंतर में सदा ही आपके दीदार की अभिलाषा है। मैं इस मनोस्थिति में हूं कि यह किस प्रकार संभव हो सके। आपने स्वयं ही प्यार जगा दिया है। आप जानते हो कि आप मुझे कितने प्रिय हो। मैं अपने गुरु पर बलिहार जाता हूं, जिसने मुझसे मेरा विछुड़ा हुआ मालिक सृजनहार मिला दिया है। गुरु जी पूर्ण समर्पण-भाव में साधारण मनुष्य-मात्र की दीन-दशा बताने हेतु नम्रता-भाव में पुन: परमात्मा को संबोधित करते हुए कहते हैं कि हे मालिक! हम मनुष्य-मात्र न जाने कितने पापों को कमाने वाले हैं लेकिन अब हम तेरे द्वार पर आये हैं। हम आपकी शरण में हैं, इसलिए कि शायद हम पापों से भरे हुओं पर भी कभी अपनी कृपा की दृष्टि कर दें। गुरु जी आगे कथन करते हैं कि हम मनुष्य-मात्र अत्यधिक अवगुणों वाले हैं। हमारे अवगुण इतने हैं कि इनकी गणना नहीं हो सकती। हे मालिक! तुम दया करने वाले हो! आपको मंजूर हो तो आप ये सब अवगुण क्षमा कर सकते हो। हम जीव अपराध करते हैं परंतु आप हमको सच्चे गुरु की संगत में लाकर निर्मल उपदेश बख्श देते हैं। अपना निर्मल नाम देकर हमें आगे के लिए पापों-अपराधों से छुड़ा लेते हो। अंत में आप जी सच्चे सतिगुरु (प्रभु) को संबोधित करते हैं कि हे मेरे सच्चे गुरु! जब हम 'गुरु' बोलते हैं तो आश्चर्यजनक आत्मिक स्थिति प्राप्त हो जाती है, आनंद छा जाता है। जैसे आपने हम जैसे अपराध करने वालों को इनसे छुड़ा लिया है क्या कोई आपके अतिरिक्त छुड़ा सकता था? कदापि नहीं। यह क्षमता मात्र आपके पास ही है। आप गुरु हो, आप पिता हो, माता हो, आप ही हमारे भाई और मित्र हो। हमारी जो स्थिति थी यह आप जानते ही हो। हम तो इस संसार में अत्यंत दीन-दशा में रुल रहे थे। कोई हमारी व्यथा पूछता तक न था। हे सच्चे गुरु जी! आपने हम जैसे कीटों को स्थापित कर दिया है। हमारा सतिगुरु, अध्यात्म मार्ग का पथ-प्रदर्शक धन्य है जिसके मिल जाने पर सभी शोक और दुख उठकर चले गए हैं।

संपादकीय

गुरु-घर के अद्वितीय सिक्ख-सेवक बाबा बुड्ढा जी

गुरु व सिक्ख का परस्पर सम्बंध बहुत गहरा है। गुरु उस अकाल पुरख की ज्योति है। यह ज्योति मानव में व्याप्त है परंतु सोई हुई अध्यात्म संवेदना को अपने दैवी स्पर्श से जागृत कर इस संसार में विचरण करते हुए उस परमात्मा से मिलन करवाती है। गुरु और शिष्य, मुरशद और मुरीद आदि युग्म धारणाएं संसार के विभिन्न मतों में भी मिलती है परंतु गुरु व सिक्ख का जो सच्चा-सुच्चा एवं गहरा परस्पर सम्बंध सिक्ख धर्म में है वह अपनी उदाहरण स्वयं है। इस सम्बंध को सिक्ख इतिहास में हुए कुछ सिक्खों ने गहरा एवं सदीवी बनाने हेतु प्रमुख योगदान डाला है। इन सिक्खों में से बाबा बुड्ढा जी का नाम सिक्ख इतिहास के पन्नों में सुनहरी अक्षरों से अंकित है। बाबा जी बचपन से ही गुरु-घर की सेवा को इस प्रकार समर्पित हुए कि सम्पूर्ण आयु ही इस सेवा के लेखे लगा गए। आप गुरु नानक पातशाह के दर्शन-दीदार करते ही गुरु-घर के साथ ऐसे जुड़े कि फिर कभी अलग न हुए। बल्कि बाबा बुड्ढा जी सिक्ख इतिहास के विषम समय में गुरु से बिछुड़ी हुई सिक्ख संगत का गुरु से मिलाप करवाने हेतु एक कड़ी, एक पुल का कार्य करते रहे। 'बुढिया! तैथों ओहले न होसां' का गुरु-फरमान सदैव विचरता रहा। बाबा बुड्ढा जी ने गुरु साहिबान और सिक्ख संगत की सेवा में जो सेवाएं हाज़िर की वह दुर्लभ एवं बेमिसाल हैं। उन सेवाओं में कुछेक का सांकेतिक विवरण हमारे सूझवान और अनुभवी लेखक सिक्ख इतिहास के अध्ययन/विशलेषण द्वारा समय-समय पेश करने का प्रयास करते रहते हैं।

बाबा बुड्ढा जी का जीवन समूह सिक्ख संगत के लिए गुरु-घर की निष्काम सेवा के साथ जुड़े रहने के लिए एक सदैवकालीन प्रेरणास्रोत है। बाबा जी ने एक खुशहाल ज़मींदार घराने में जन्म लेकर अपने आपको सदैव ही एक निमाणा (अनन्य) सिक्ख-सेवक समझा; कभी भी ज़मीन, संपत्ति, धन-दौलत का तनिक भी अहं भाव पास नहीं फटकने दिया। 'बूड़ा' नामक बालक गुरु नानक पातशाह के दर्शन-दीदार करते समय गुरु जी के साथ भेंटवार्ता समय जो बातें करते हैं, गुरु जी वो बातें सुनकर खुश होकर उस बालक को 'बुड्ढा' का गौरवशाली रुतबा बख़्श देते हैं। गुरु नानक पातशाह द्वारा रहमतों के घर में आकर बख़्शिश किया यह रुतबा उसी दिन से आपको हासिल है। यह रुतबा युगों-युगांतरों तक अटल है।

बाबा जी की इच्छा थी कि पूरी ज़िंदगी इस रूप में गुरु-घर की सेवा को समर्पित हो सके और गृहस्थ धर्म न अपनाया जाए लेकिन गुरु-हुक्म अथवा गुरमति जीवन युक्ति का सम्मान करते हुए उसे सर आंखों से प्रवान करते हुए आप गृहस्थ धर्म के धारक बने। संपूर्ण परिवार ही गुरु-घर की सेवा को समर्पित हुआ। पारिवारिक फर्ज़ों एवं गुरु-घर के आदर्श समतुल्य की बाबा बुड्ढा जी द्वारा प्रस्तुत उदाहरण गुरु-घर की सेवा को निभाने के लिए प्रकाश स्तंभ है।

बाबा बुड्ढा जी को श्री अमृत सर (सरोवर), श्री हरिमंदर साहिब, श्री अकाल तख़्त के

निर्माण की सेवा अपने हाथों से करने व सिक्ख संगत से करवाने का गौरव हासिल हुआ। श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर की बड़ी परिक्रमा में स्थित बेर बाबा बुड्ढा जी परम पावन पवित्र केंद्रीय गुरु-धाम की सेवा की निशानी के रूप आज भी मौजूद है। बाबा बुड्ढा जी के शीश पर श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पावन स्वरूप को सुशोभित किया गया, जिस पर पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी के अपने कर-कमलों से चंवर किया। बाबा बुड्ढा जी को पावन स्वरूप का पावन पाठ संगत को श्रवण करवाने की महान सेवा श्री हरिमंदर साहिब के सर्व-प्रथम ग्रंथी साहिब के रूप में हासिल हुई। बाबा बुड्ढा जी ऐसे भाग्यशाली गुरसिक्ख हैं जिन्हेंको छ: गुरु साहिबान के अपनी आंखों से साक्षात दर्शन करने, निजी सेवक के रूप में अंग-संग विचरण तथा वचन-विलास श्रवण करने व गुरु-हुक्मों को कमाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। बाबा जी को श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी, श्री गुरु अरजन देव जी तथा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी को गुरगद्दी पर विराजमान करने की रस्म को निभाने का गौरव हासिल हुआ। गुरु-इतिहास अथवा सिक्ख इतिहास में से दुर्लभ गौरव मात्र बाबा बुड्ढा जी को प्राप्त है। बाबा जी ने प्रिथी चंद द्वारा गुरु-घर को पहुंचाई जा रही क्षति को एक मज़बूत किले की भांति डटकर रोका तथा सिक्ख संगत को गुरु व गुरबाणी की मौलिक धारा से जोड़े रखा। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की संपूर्ण शिक्षा-दीक्षा की सेवा आप जी को ही मिली। बाबा जी ने अंतिम सांस भी गुरु-गोद में ही लिए।

आज हमें आवश्यकता है बाबा बुड्ढा जी द्वारा दर्शाए गए मार्ग पर चलकर निष्काम सेवा कमाने का प्रण लेने की ताकि हम सिक्खी की सुगंध दूर-दराज़ तक बिखेर सकें।

एकु पिता एकस के हम बारिक तू मेरा गुर हाई ॥
सुणि मीता जीउ हमारा बलि बलि जासी हरि दरसनु देहु दिखाई ॥१॥
सुणि मीता धूरी कउ बलि जाई ॥
इहु मनु तेरा भाई ॥ रहाउ ॥
पाव मलोवा मलि मलि धोवा इहु मनु तै कू देसा ॥
सुणि मीता हउ तेरी सरणाई आइआ प्रभ मिलउ देहु उपदेसा ॥२॥
मानु न कीजै सरणि परीजै करै सु भला मनाईऐ ॥
सुणि मीता जीउ पिंडु सभु तनु अरपीजै इउ दरसनु हरि जीउ पाईऐ ॥३॥
भइओ अनुग्रहु प्रसादि संतन कै हरि नामा है मीठा ॥
जन नानक कउ गुरि किरपा धारी सभु अकुल निरंजनु डीठा ॥४॥

Final

सिध गोसटि-एक दार्शनिक काव्य रचना

-डॉ. अमृत कौर*

सिध गोसटि श्री गुरु नानक देव जी की लंबी संवादी दार्शनिक रचना है, जिसमें गुरु के पथ प्रदर्शन द्वारा शबद गुरु में लीन होकर सत्य के मार्ग पर चलते हुए सहयोग द्वारा परमात्मा की प्राप्ति के मार्ग को दर्शाया गया है। गोरख नाथ के योगियों का जीवन पलायनवादी जीवन था। ये योगी गृहस्थ जीवन त्यागकर विरक्त साधु बनकर जंगलों में कंद-मूल खाकर जीवन यापन करते थे, मुंदरा, खप्पर, झोली, खिंथा आदि चिन्ह धारण करते थे, जो आध्यात्मिक जीवन के विकास में कोई सहायता नहीं करते। श्री गुरु नानक देव जी इन चिन्हों की सांकेतिक व्याख्या करते हुए योगियों से कहते हैं कि मन को माया की ओर से हटाकर परमात्मा की ओर प्रेरित करना तुम्हारा खप्पर होना चाहिए। प्रकृति के पांच तत्वों के उपजाऊ गुण अर्थात् आकाश की निर्लेपता, अग्नि की पवित्रता, वायु की समदर्शता, जल की शांति, पृथ्वी का धैर्य तुम्हारे सिर की टोपी बन जाए। तुम्हारा शरीर आध्यात्मिकता का अचल आसन बन जाए तो तुम्हारा मन तुम्हारे वीर्य का रक्षक सिद्ध होगा। व्यक्तित्व का संयम तुम्हारी मृगछाला होनी चाहिए। मन पर विजय प्राप्त करना तुम्हारी लंगोटी होनी चाहिए, सच्चाई, संतोष, संयम में दैवी कुरमों को अपनाकर नाम जपना तुम्हारी जीवन शैली होनी चाहिए गुरु शबद द्वारा काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि विकारों को दूर करना हउमै और ममता के विकारों को दूर कर उचित मुंद्रों का पहनना है। सच्चा योगी वह है जो हुक्म को पहचान कर हउमै से स्वतंत्र होकर तीन गुणों से मुक्त हो निर्मल हो जाता है। वह इस दुस्तर संसार सागर में कमल के पुष्प की भांति निर्लेप रहता हुआ संसार सागर से पार उतर जाता है।

सुरति सबदि भव सागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे ॥ *(पन्ना ९३८)*

सिद्ध श्री गुरु नानक देव जी से प्रश्न करते हैं कि यदि उदासी पोशक धारणा श्रेष्ट नहीं है तो आपने उदासी बाणा धारण कर घर-बाहर को क्यों त्यागा है? गुरु जी उत्तर देते हैं :

गुरमुखि खोजत भए उदासी ॥ *(पन्ना ९३९)*

गुरमुखता मनुष्य को सदैव सिमरन में लीन रखती है। गुरमति दर्शन के अनुसार गुरमुख व्यक्ति को आदर्श व्यक्ति माना गया है सिध गोसटि में गुरमुख व्यक्ति के व्यक्तित्व की विस्तृत व्याख्या की गई है :

गुरमुखि रोमि रोमि हरि धिआवै ॥

(पन्ना ९४१)

गुरमुख व्यक्ति प्रभु का रोम-रोम से सिमरन करता हुआ, सिमरन में लीन रहता हुआ व सिमरन द्वारा अपनी सम्पूर्ण शक्तियों में विकास और प्रकाश द्वारा प्रभु से एकसार और एकसुर हो जाता है। सिमरन उसको एकाग्रता और सुचेतता के गुण प्रदान करता है, जिससे उसका मन चंचल और विचलित नहीं होता। वह सहज रूप से प्रेम संयम, सुंदरता, जप, तप आदि निर्मल गुणों को अपने अंदर विकसित और प्रफुल्लित कर उन्हें कर्मयोग के सिमरनकारी

*१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, जीरकपुर-१४०६०४ (पंजाब), फोन : +९१९८१५१-०९९५७

कार्यों, निष्काम सेवा द्वारा संसार को सुंदर बनाने का प्रयास करता है। कर्म में कुशलता ही वास्तविक योग है, गुणवाद कर्मों से ही व्यक्तित्व का निमार्ण होता है। जीवन में शुभ गुणों का विकास करना प्रभु के गुणों का गायन करना है।

गुरमुखि असट सिधि सभि बुधी ॥ (पन्ना ९४१)

प्रभु-नाम परायणता के द्वारा गुरमुख को आठ सिद्धियां स्वाभाविक रूप से प्राप्त हो जाती हैं जो शरीर की अरोग्यता, बुद्धि का ज्ञान, हृदय का प्रेम, इच्छा की शक्ति, विवेक की पवित्रता, चित्त की कथन शक्ति, सुरति की एकाग्रता और मति की उज्ज्वलता मनुष्य के अंदर प्रत्यक्ष ज्योति स्वरूप प्रभु निवास करते हैं, गुरमुख बन कर प्रभु-नाम परायणता होकर उनके दर्शन किए जा सकते हैं।

श्री गुरु नानक देव जी की दृष्टि में श्री रामचंद्र जी सच्चे गुरमुख थे। पूर्ण योगी थे।

गुरमुखि बांधिओ सेतु बिधातै ॥
लंका लूटी दैत संतापै ॥ (पन्ना ९४२)

श्री राम चंद्र ने समुद्र पर पुल बांधा, लंका को लूटा और दैत्यों का संहार किया। सर्पवृत्ति वाले रावण का निधन किया। रावण मनमुख था। इसलिए उसे सर्पणि माया का बेटा सर्पवृत्ति वाला मनुष्य कहा गया है। गुरमुख के अंदर और बाह्य की सांसारिक तृष्णाओं के सागर पर संयम का पुल बांधता है। काम, क्रोध और विषय-विकारों की नगरी को लूटता है, राक्षस या दुष्ट व्यक्तियों का नाश करता है। सर्पवृत्ति वाले माया के शिष्यों के पाप में गलतान रहते हैं। नेक मनुष्यों के जीवन का रहस्य समझाता और उन्हें गुरमुख बनाता है। आज्ञानी मनुष्य को संसार सागर के पार करने के योग्य बनाता है।

गुरमुख अपसारवादी नहीं होता। जीवन की कठिनाइओं का सामना चढ़दी कला में रह कर करता है। वह गृहस्थ जीवन यापन करता हुआ गृहस्थ जीवन का निर्वाह सुचारू रूप से करता है।

गुरमुखि साची कार कमाइ ॥ (पन्ना ९४२)

वह कड़े परिश्रम द्वारा अपनी रोज़ी-रोटी कमाता है, वह शारीरिक, मानसिक, आत्मिक, स्नान द्वारा अपने शरीर को निरोग और स्वच्छ रखता है। गुरमुख के पास प्रभु-नाम का सूर्य होता है जिसके द्वारा वह अपनी हउमै को जला कर उसे दैवी हुक्म में परिवर्तित कर देता है।

गुरमुखि वैर विरोध गवावै ॥ (पन्ना ९४२)

परमात्मा प्रेम स्वरूप है, गुरमुख का परमात्मा से चेतन संबंध होने के कारण वह प्रेम स्वरूप बन जाता है। वह सब से प्रेम पूर्ण व्यवहार करता हैं *'जिन प्रेम किया तिन ही प्रभ पाइओ ॥'* उसका जीवन दैवी संगीत बन जाता है। वह संसार के कण-कण में प्रभु-नाम में प्रेम को पाकर उसके साथ सांझ और अपनत्व का साक्षात् रिश्ता स्थापित करते हुए मित्रता, प्रफुल्लता, विगास और प्रसन्नता की साक्षात् मूर्ति बन जाता है।

सिध गोसटि में गुरमुख बनने और मनमुखता से त्याग पर बल दिया गया है। मनुष्य के जीवन में दो बड़ी शक्तियां कार्य करती हैं-- एक हउमै की दूसरी नाम की, हउमै परायण मनुष्य मनमुख होता है और नाम परायण मनुष्य गुरमुख। मनमुख मनुष्य की वृत्ति मन की रानी हउमै पर केंद्रित रहती है, वह पाशविक मन की दुनिया में रहता है, हउमै प्रेरित कार्य के कारण आवागमन के चक्करों में घूमता रहता है, माया का पुजारी, मायिक चस्कों का आशिक, अज्ञान के कारण माया और हउमै का गुलाम बन नास्तिकता के जंगलों में भटकता रहता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि विकारों के दुश्मन मनुष्य की आत्मा को लूट

Final

लेते हैं। नास्तिकता के कारण मनमुख बड़ा कमज़ोर मनुष्य होता है। विषयों-विकारों के सर्प उसे सहज रूप से डस लेते हैं। प्रभु-नाम के रंग से रहित होने के कारण उसका बोलचाल नीरस, झूठा दुखदायी, अभिमानी होता है, जिससे जीवन यात्रा में उसे घाटा ही घाटा पड़ता है। अत: जीवन का वास्तविक रहस्य यह है कि हउमै को नाम में और मनमुखता को गुरमुखता में परिवर्तित कर दिया जाए।

अब प्रश्न यह उठता है कि मनमुखता को गुरमुखता में कैसे परवर्तित किया जा सकता है? सच्चे गुरु के पथ प्रदर्शन में जो,

अवगण मेटै गुणि निसतारै ॥ (पन्ना ९४२)

नाम-सिमरन और शबद गुरु के विकास द्वारा मनमुखता को गुरमुखता में परिवर्तित किया जा सकता है। सिद्ध गुरु जी से प्रश्न करते हैं कि आप का गुरु कौन है? गुरु जी उत्तर देते हैं :

सबदु गुरु सुरति धुनि चेला ॥ (पन्ना ९४३)

शबद मेरा गुरु है और मैं उसका शिष्य हूं क्योंकि मैंने अपनी सुरति को नाम की ध्वनि पर निरंतर केंद्रित किया हुआ है और वह मेरे आध्यात्मिक मार्ग निर्देशन का स्रोत है। शबद संपूर्ण रोशनियों, सच्चाइओं, वेदों और इतिहासों का एकमात्र स्रोत हैं, सुरति के शबद पर केंद्रित करके मनुष्य स्वयं शबद रूप बन जाता है।

दैवी साये में ढलकर गुरमुखता को प्राप्त कर जीवन मुक्त हो जाता है।

नानक गुरमुखि सबदि निसतारै ॥ (पन्ना ९४१)

सिध गोसटि के अनुसार नाम संपूर्ण आनंद का स्रोत है।

नामे राते अनदिनु माते नामै ते सुखु होई ॥
(पन्ना ९४६)

मनुष्य नाम का अमृत पान कर प्रभु-नाम के आनंद को प्राप्त करता है। नाम अमृत सिमरन द्वारा पान किया जा सकता है, परमात्मा मनुष्य के अंदर है, सत्य और प्रभु-नाम के सिमरन द्वारा अपने अंदर परमात्मा को मूर्तिमान करके मन स्वयं हरि मंदिर (प्रभु का घर) बन जाता है।

परंतु प्रभु-नाम की प्राप्ति सतिगुरु की संगत से मिलती है, उसके पथ निर्देशन से मिलती है।

बिनु सतिगुर भेटे नामु पाइआ न जाइ ॥
(पन्ना ९४६)

परमात्मा परम गुरु है, उसमें सगुण स्वरूप गुरु रूप के दर्शन, संतों की संगत, गुरबाणी का पाठ, धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन, प्रकृति और अंतरात्मा के प्रकाश द्वारा मिलता है, गुरु परायण होकर ज्ञान की प्राप्ति द्वारा प्रभु-नाम के अभ्यास द्वारा जीवन में नाममई शक्तियां ज्ञान, प्रेम, धर्म, पवित्रता, आदि गुणों के विकास द्वारा होता है। जिस मनुष्य को सद्‌गुरु मिल जाता है वह अपने तन को सुंदर-सी दुकान और मन को व्यापारी बनाकर माया की तृष्णाओं के अवचलित होकर जीवन का व्यापार करता है। इस प्रकार माया के बंधनों से छुटकारा प्राप्त कर संसार रूपी दुस्तर सागर से पार उतर जाता है। माया के जीवन रूपी स्त्री को प्रभु पति से विलग किया हुआ है। दोनों में संसार रूपी सागर का अंतराल बना हुआ है। परमात्मा ने संसार में गुरु को भेजा और गुरु पुल बन गया। जिस जीव रूपी स्त्री को सच्चा गुरु मिल जाता है, प्रभु से अंतर मिट जाता है और वह सच्चे प्रभु में समा जाता है :

नामि रते सचि रहे समाइ ॥ (पन्ना ९४१)

सिध गोसटि श्री गुरु नानक देव जी की एक गहन दार्शनिक रचना है, जिसमें प्रश्नोत्तर द्वारा जीवन की गहन आध्यात्मिक समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है।

(शेष पृष्ठ १२ पर)

Final

श्री गुरु रामदास जी की विनयशीलता और विशाल हृदयता

-डॉ. नवरत्न कपूर*

जन्म-स्थान और विवाह : चौथे सिक्ख गुरु श्री गुरु रामदास जी का जन्म २५ आश्विन, संवत् १५९१ तद्नुसार २४ सितंबर, १५३४ ई को पिता श्री हरिदास जी तथा माता श्री दइआ कौर जी के घर चूना मंडी, लाहौर में हुआ। माता-पिता के ज्येष्ठ सुपुत्र होने के कारण उन्हें 'जेठा' (ज्येष्ठ संस्कृत शब्द का पंजाबी रूप) पुकारा जाता था। पहले भाई जेठा जी की माता परलोक सिधार गईं और कुछ समय पश्चात् उनके पिता श्री हरिदास जी भी संसार छोड़ गए। अनाथ बाल को उसकी नानी अपने गांव बासरका ज़िला श्री अमृतसर ले आईं। ननिहाल वालों की आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी न होने के कारण वे किशोरावस्था में ही उबले हुए चने आस-पास के कसबों में बेचकर जीवन यापन करने लगे। फिर वे तीसरे पातशाह श्री गुरु अमरदास जी की संगत में आ गए।

श्री गुरु अमरदास जी अपनी बड़ी सुपुत्री का विवाह कर चुके थे और अपनी छोटी बेटी बीबी भानी जी की सगाई के लिए अपनी धर्म पत्नी से विचार कर रहे थे कि भाई जेठा जी उन्हें तन-मन से गुरु-घर में सेवा करते दीख पड़े। उन्होंने जान लिया कि भाई जेठा जी चरित्रवान युवक है। अत: उन्होंने अपनी बेटी बीबी भानी का विवाह भाई जेठा जी से सन् १५५३ ई में कर उन्हें अपने घर पर ही रख लिया। इनके तीन सुपुत्र हुए। इनके नाम और जन्म वर्ष इस प्रकार हैं प्रिथी चंद (सन् १५५७), महादेव (सन् १५६०), श्री गुरु अरजन देव जी (सन् १५६३)

विनयशीलता : संकीर्ण विचारों के मुगल श्री गुरु अमरदास जी के बढ़ते प्रभाव को देखकर उनसे ईर्ष्या करते थे। सन् १५५७ ई में अकबर बादशाह शेरशाह सूरी के भतीजे सिकंदर सूरी को उसके कुकर्मों का मज़ा चखवाने के लिए दिल्ली से लाहौर पहुंचा तो उसने सारा दोष श्री गुरु अमरदास जी के सिर पर थोप दिया। सम्राट अकबर ने श्री गुरु अमरदास जी को लाहौर बुलाया तो उनकी वृद्धावस्था के कारण उनके छोटे दामाद भाई जेठा जी ने उन्हें रोक दिया और स्वयं लाहौर पहुंच गए। भाई जेठा जी ने शाही दरबार में पहुंचकर बड़े तर्क संगत ढंग से सिक्ख धर्म के स्वरूप तथा प्रचार-प्रसार का विवरण दिया तो उनकी धर्म-निर्पेक्षता की बातें सुनकर सभी विरोधी निरुत्तर हो गए और सम्राट अकबर उनका परम श्रद्धालु बन गया। इसके फलस्वरूप श्री गुरु रामदास जी के गुरुगद्दी काल (सन् १५७४-१५८१) में सम्राट अकबर ने पंजाब के किसानों का लगान एक वर्ष के लिए माफ कर दिया था और जागीर भेंट की जहां पर उन्होंने 'गुरु के चक्क' (श्री अमृतसर) की नींव रखी और अपने जीवन काल में जो सरोवर खुदवाना शुरू किया था, उसका कार्य भी यथासमय संपन्न हो गया। इसका ज़िक्र भाई गुरदास जी ने किया है।

पूरनु तालु खटाइआ अंम्रितसरि विचि जोति जगावै। *(वार १:४७)*

श्री गुरु रामदास जी की विनयशीलता का

*१६९७, देवान मूल चंद स्ट्रीट, नजदीक आर्य समाज, पटियाला-१४७००१ (पंजाब) फोन: +९१५९५२४२६०८३

एक विस्तृत उदाहरण निम्नलिखित घटना से प्राप्त होता है :

जब गोइंदवाल में बावली का कार्य आरंभ हुआ तो श्री गुरु रामदास जी सेवा में मग्न थे। उनके कुछ रिश्तेदार उनसे मिलने आए जब उन्होंने श्री गुरु रामदास जी को मज़दूरों के साथ सिर पर टोकरी उठाये देखा तो श्री गुरु अमरदास जी के सामने श्री गुरु रामदास जी को भला बुरा कहा कि आप उनके दामाद होकर मज़दूरी क्यों कर रहे हो। जब श्री गुरु अमरदास जी ने जेठा जी की ओर देखा तो उन्होंने (श्री गुरु रामदास जी ने) हाथ जोड़कर कहा गुरु जी, इन्हें क्षमा कर दो! ये नहीं जानते कि इस मज़दूरी का कैसा स्वाद और फल है।

गुरुगद्दी की प्राप्ति और विनम्रता : जब श्री गुरु अमरदास जी का अंतिम समय समीप आया तो उन्होंने अपने बड़े दामाद भाई रामा जी और छोटे दामाद भाई जेठा जी के गुरमति-ज्ञान का परीक्षण किया। आप हर प्रकार से कामयाब हुए और सन् १५७४ ई में आपको गुरुगद्दी प्रदान की गई। गुरगद्दी प्रदान होने का दृश्य और श्री गुरु रामदास जी की मानसिक स्थिति का वर्णन प्रोफ़ेसर साहिब सिंघ ने इस प्रकार किया है :

"यह कोई साधारण-सी घटना नहीं थी। श्री गुरु रामदास जी को आज वह "रब्बी तख़्त" (आध्यात्मिक शासन) मिल रहा था। आपकी आंखों के सामने चूना मंडी की गलियों का नक़शा (मानचित्र) आ गया। सात वर्ष की अवस्था तक के वे दिन स्मरण हो आए, जब लघु अवस्था में मातृ-प्रेम से विहीन गरीब पिता की गोद में पल रहे थे। जब सात वर्ष की अवस्था में पहुंचे तो पिता का भी निधन हो गया आप पिता के घर में हमेशा के लिए ताला लगते देखकर सहमे हुए नानी की उंगली पकड़कर हमेशा के लिए चूना मंडी की गलियों से विदा हो आए थे। जिस समय श्री गुरु अमरदास जी ने श्री गुरु रामदास जी को गद्दी पर बैठा कर भरी संगत में उनके आगे सिर झुकाया तो वे (श्री गुरु रामदास जी) वैराग्य में आकर कहने लगे :

"पातशाह! आप स्वयं जानते हो, जब मैं अनाथ, आश्रयहीन व्यक्ति लाहौर की गलियों में निकलता था, तब मेरी क्या हालत थी। नानी ने मुझे गले लगाया किंतु नानी भी बेचारी निर्धन थी। मेरे सद्गुरु! बस यह केवल आपकी कृपा थी। आपने मेरी ओर प्रेमपूर्वक झांका। आपने मुझ अनाथ की भुजा पकड़ी। मिट्टी में रुलते मुझ गरीब को आपने आकाश पर पहुंचा दिया है। इसी वैराग्य-भावना का चित्र श्री गुरु रामदास जी ने अपनी बाणी में इस प्रकार प्रदर्शित किया है :

जो हमरी बिधि होती मेरे सतिगुरा सा बिधि तुम हरि जाणहु आपे ॥
हम रुलते फिरते कोई बात न पूछता गुर सतिगुर संगि की हम थापे ॥ (पन्ना १६७)

बाणी-संग्रह और विशाल हृदयता : श्री गुरु अमरदास जी के संपर्क में आने पर श्री गुरु रामदास जी ने धार्मिक गोष्टियों में भाग लेकर प्रत्येक धर्म, कर्म और दर्शन-शास्त्र की वास्तविक्ता को समझा और गुरु-घर की टहल सेवा की। उनके ६७९ पद 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' के तीस रागों में संकलित हैं। उनके विनयशील तथा धर्म-निरपेक्ष व्यक्तित्व के विषय में प्रोफ़ेसर साहिब सिंघ जी ने फिर लिखा है, यथा :

"श्री अमृतसर सर्वधर्म एकता का चिन्ह है। यह ऐसा धर्म केंद्र बना, जहां ऊंच-नीच, जाति-पाति अथवा धार्मिक भेदभाव का कोई प्रश्न ही नहीं। श्री गुरु रामदास जी ने एक संयुक्त एवं सामुदायिक भावना के आदर्श का प्रचार किया। इस आदर्श को (उनके सुपुत्र, पंचम सिक्ख गुरु) श्री गुरु अरजन देव जी ने और

भी परिपक्व कर दिया, जबकि उन्होंने एक सामूहिक धर्म स्थान श्री हरिमंदर साहिब का निर्माण करवा कर उसमें 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' के रूप में संग्रहीत बाणी को स्थापित किया। गुरु जी ने ऐसा धर्म-स्थान बनवाया, जिसके चारों ओर चार दरवाज़े रखे गए, जिसका प्रत्यक्ष मंतव्य यह था कि चारों दिशाओं से चारों वर्णों के लोग आ सकते हैं। इस प्रकार 'धर्म' और 'मज़हब' के नाम पर भेदभाव की बजाए यहां पर धार्मिक मेल-मिलाप और पारस्परिक प्रेम पर ज़ोर दिया गया। 'गुरु के चक्क' में जहां सिक्खों ने डेरे लगाए, वहीं पर हिंदुओं तथा मुसलमानों को भी बसाया गया। गुरु जी ने केवल नगर ही नहीं, सरोवर को भी सार्वजनिक बनाया। यहां पर प्रत्येक धर्म तथा प्रत्येक जाति के व्यक्ति को स्नान करने की छूट थी। अतः श्री अमृतसर केवल सिक्खों का ही धार्मिक केंद्र नहीं प्रत्युत वह सांप्रदायिक एकता तथा आर्थिक खुशहाली की दृष्टि से भी एक आदर्श रचना बन गया। श्री गुरु रामदास जी ने इस धर्म-केंद्र को हर तरह सम्पूर्ण तथा आर्थिक दृष्टि से संपन्न बनाने के लिए यहां पर बावन पेशों। व्यवसायों के लोग बसाए। भिन्न-भिन्न कार्य करने वाले ये लोग सैंकड़ों की संख्या में कसूर, पट्टी तथा कलानौर से लाए गए। इस कार्य हेतु गुरु साहिब ने बाबा बुड्ढा जी, गुरिए, रूप राम, चंदर भान तथा भाई साल्हो जी आदि की सहायता ली थी।

पाद टिप्पणियां

1. Gokul Chand Narang : Gloricous History of Sikhism, Page 49.

2. Khushwant Singh : History of Sikh (Amritsar Gazetter 1883-84) Page 55.

3. (क) प्रोफ़ेसर साहिब सिंघ जीवा विरतांत स्त्री श्री गुरु रामदास जी, पन्ना १५-१६।

4. (क) Professor Surinder Singh Kohli : A Critical Story of Adi Granth, Page 6.

(ख) भाई कान्ह सिंघ 'नाभा' ने महान कोश, पन्ना ३२७

सिध गोसटि-एक दार्शनिक काव्य रचना

(पृष्ठ ९ का शेष)

इस रचना में जीवन में शबद गुरु के महत्त्व पर बल दिया गया है। जब अंतःकरण में शबद बस जाता है तब तन-मन नाम के रंग में रंगकर शीतल हो जाते हैं। मनुष्य प्रभु-प्रेम द्वारा, आत्म सर्मपण द्वारा, प्रभु की नदर निहालता का अधिकारी बनता है। काम, क्रोध आदि विषयों की ज़हर भरी अग्नि को दूर कर सकता है। हउमै से स्वतंत्र होकर शबद या नाम-अभ्यास द्वारा मनुष्य में विनम्रता, मित्रता, प्रेम के गुणों का संचार होता है। धर्म युद्ध की शक्ति, धर्म युद्ध का चाव उत्पन्न होता है, जिससे जीवन की कठिन समस्याओं से जूझने की शक्ति आ जाती है। जीवन में गुरमुखता के विकास द्वारा आध्यात्मिकता का विकास होता है, गुरमुख ही सहज अवस्था को प्राप्त करते हैं। मन की वास्तविक दशा सहज अवस्था है, त्रिगुणातीत पद है। जब तक तन-मन के द्वारा उसकी प्राप्ति नहीं होती जीवन संतुष्टि, उचित जीवन जीने का ढंग, आनंद और कल्याण की प्राप्ति नहीं होती और न ही मनुष्य कर्त्ता पुरख परमात्मा की दृष्टि में स्वीकृत होता है। ۞

Final

श्री गुरु रामदास जी एवं श्री अमृतसर

*-प्रो प्रकाश सिंघ**

श्री गुरु रामदास जी एक महान पवित्र आत्मा थे। वो एक पूर्ण सतिगुरु तथा श्री गुरु अमरदास जी के अनन्य व निष्काम सेवक थे। वो एक अर्शी ढाडी व उच्च कोटि के कवि थे साथ ही वो बहुत बड़े समाज सुधारक व निर्माणिक भी थे। आदि गुरु, श्री गुरु नानक देव जी के दर्शाए गए मार्ग पर चलते हुए आप ने कई पक्षों से सामाजिक परिवर्तन लाया। श्री गुरु अमरदास जी के हुक्म के अनुसार श्री अमृतसर की नींव रखी तथा अपनी निगरानी तले इसका निर्माण किया। 'श्री अमृतसर' श्री गुरु रामदास जी की अमर यादगार है। श्री अमृतसर के अर्थ है-- 'अमृत सरोवर' यह पावन सरोवर जिसके मध्य श्री हरिमंदर साहिब सुशोभित है।

धर्म के प्रचार हेतु, परस्पर प्यार हेतु, व्यापार के लिए व समाज सुधार के लिए गुरु साहिबान ने कई स्थान बसाए। श्री गुरु नानक देव जी ने रावी के तट पर करतारपुर नगर बसाया। श्री गुरु अंगद देव जी ने खडूर साहिब को भाग लगाए। श्री गुरु अमरदास जी ने बाउली बनाकर गोइंदवाल साहिब को आबाद किया। श्री गुरु रामदास जी जंगल में मंगल लगाकर श्री अमृतसर की नींव रखी, जिसको पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव ने संपूर्ण किया। अमृत सरोवर के मध्य श्री हरिमंदर साहिब बनवाया, जिसके अंदर पावन शबद का प्रकाश करवाया तथा कीर्तन नाम-बाणी का प्रवाह चलाया जो कि निरंतर जारी है।

वह स्थान यहां आजकल श्री दरबार साहिब शोभनीय है और जहां श्री अमृतसर गुरु की नगरी बस रही है। पुराने समय में एक घना जंगल था। कुछेक इतिहासकारों ने ज़िक्र किया है कि इस इलाके में बोधी भिक्षुओं ने यहां पर एक मठ बनाया था, बुद्ध धर्म के पत्न के साथ ही वह ध्वस्त हो गया।

डॉ हरि राम गुप्ता के अनुसार, सिकंदर के हमले के समय इस जगह पर एक छोटा-सा किला बना हुआ था जो कि बाद में प्रयोग न होने के कारण खत्म हो गया।

समय गुज़रता गया। सिक्ख धर्म के विकास से यह स्थान उजागर हुआ। श्री गुरु नानक देव जी एक से ज्यादा बार यहां पर आए या यहां से गुज़रे। सन् १५०२ ई में श्री गुरु नानक देव जी भाई मरदाना जी के साथ पहली बार यहां से गुज़रे तथा यहां की पवित्रता व महत्ता बताई। इसके बाद फिर गुरु जी भाई लहिणा जी को साथ लेकर यहां आते रहे। महाकवि भाई संतोख सिंघ जी ने इस जगह की प्राकृतिक सुंदरता, महत्ता के बारे में श्री गुरु अंगद देव जी को बताया तथा उनको आगे अपने नशीन श्री गुरु अमरदास जी को और तृतीय पातशाह ने भाई जेठा जी को जो कि बाद में श्री गुरु रामदास जी कहलाए, इस स्थान पर सरोवर खुदवाने, धर्म केंद्र बनाने तथा नगर बसाने के लिए भेजा।

जिस तरह द्वितीय गुरु श्री गुरु अंगद देव जी की मौजूदगी में श्री (गुरु) अमरदास जी ने गोइंदवाल साहिब नगर बसाकर लोक-सेवा का कार्य शुरू कर दिया था, श्री गुरु रामदास जी ने भी अमृत-सरोवर की खुदाई तथा नगर

Final

बसाने की सेवा तृतीय गुरु जी के अदेशानुसार आरंभ की। बउली साहिब, गोइंदवाल साहिब की सेवा लगभग छ: वर्ष तक चलती रही। इस सेवा में श्री गुरु रामदास जी ने तन-मन से योगदान डाला तथा तजुर्बा हासिल किया।

आप ने संगत के साथ मिलकर सेवा की। रिश्तेदारों व सम्बंधियों के तानों की प्रवाह न की, बल्कि अडोल रहकर श्रद्धा, सिदक (धैर्य) तथा गुरु-प्यार का वो सबूत दिया, जिसकी मिसाल मिलनी बहुत ही कठिन है। इस अडोल निश्चय, अथाह गुरु-श्रद्धा, बेमिसाल सेवा तथा एकरस नाम-सिमरन सदका आप को गुरगद्दी देने से पूर्व ही तृतीय पातशाह जी ने चुनकर श्री अमृतसर नगर बसाने की ज़िम्मेदारी सौंपी। फिर आप जी ने कई वर्षों तक निरंतर एक रस भक्ति की तथा निष्काम सेवा को मुख्य रखकर श्री गुरु अमरदास जी ने गुरगद्दी के लिए भी आप को ही चुना।

श्री गुरु अमरदास जी ने लगभग सारा समय माझा क्षेत्र के गावों में ही विचर कर व्यतीत किया। आप इस इलाके से अच्छी तरह से अवगत थे। सिक्ख सेवकों की संख्या दिन-बदिन बढ़ रही थी। आपने यह अवश्यक समझा कि अब श्री गुरु नानक देव जी के अनुसार सिक्खी का केंद्र उस घने जंगल में बनाया जाए जिसका ज़िक्र ऊपर किया गया है। पास के गावों गुमटाला, तुंग, गिलवाली तथा सुलतानविंड आदि के सज्जनों एवं चौधरियों को बुलवाकर उनको गुरु जी ने बताया कि वो चाहते हैं कि यहां पर नगर बसाया जाए। यह ज़िक्र सन् १५७० ई का है। यह परगना ले लिया गया।

जब गोइंदवाल साहिब में बाउली की सेवा संपूर्ण हो गई तो इसके कुछ समय बाद श्री गुरु अमरदास जी ने श्री गुरु रामदास जी को आज्ञा की कि श्री अमृतसर बसाओ, जिन्होंने आकर श्री अमृतसर की नींव रखी। यहां पहले सरोवर का टक्क लगाया, जिसका नाम संतोखसर है। गुरु जी जिस शीशम के वृक्ष तले बैठकर सेवा करवाते रहे वो अब तक मौजूद है। कुछ समय बाद अमृत-सरोवर (श्री अमृतसर) का टक्क लगाया गया।

यहां श्री गुरु रामदास जी परिवार सहित आकर टिके थे तथा रिहायशी महल बनवाया था। वहां 'गुरु के महल' नामक गुरुद्वारा साहिब कायम किया जो कि अब गुरु की अपार कृपा से बहुत ही सुंदर बन गया है। इस गुरु के महलों में पंचम तथा छठम् पातशाह जी भी रहे।

पहले जो गांव बसा उसका नाम 'चक्क गुरु' या 'चक्क रामदास' हुआ। बाद में 'रामदासपुर' नाम से प्रसिद्ध हुआ। गुरु साहिबान के यहां बसने के कारण यहां की आबादी दिनों में ही बढ़ती गई। यह गांव एक नगरी के रूप में दिखाई देने लगा तथा यह गुरु की नगरी कहलाने लगी।

सन् १५७७ ई में श्री गुरु रामदास जी ने गांव तुंग वालों से सात सौ रुपए देकर पांच सौ बीघे ज़मीन और खरीदकर पटा लिखवा लिया। इस ज़मीन पर गांव तुंग की मलकियत थी। जब इस गांव के इर्द-गिर्द के इलाके के लोगों को पता चला कि गुरु जी ने यहां गुरसिक्खी का केंद्रीय स्थान बनाना है तो अलग-अलग व्यवसायों के अनेकों लोगों ने यहां पर घर बनाने शुरू कर दिए। भाई साल्हो (जिसका टोभा श्री अमृतसर में कायम है) तथा गुरु-घर के कुछ अन्य परम सेवकों ने अपने रिश्तेदारों व सज्जन-मित्रों की मदद से पास-पड़ोस के गावों में कई लोगों को प्रेरित कर यहां लाकर बसा लिया। दुकानें खुलनी शुरू हो गईं। सिक्ख इतिहासकारों के अनुसार लगभग बावन व्यवसायों के लोग यहां आकर बस गए। गुरु

बाज़ार में खूब रौनक हो गई जो कि 'गुरु के महल' के बिलकुल समीप है।

'रामदासपुर' बाद में अमृत (सर) सरोवर के नाम पर श्री अमृतसर नगर से मशहूर हो गया, जो कि अब तक इस नाम से ही कायम जगत प्रसिद्ध है एवं प्रचलित है तथा इसी नाम पर ज़िले का नाम भी है।

भाई जेठा जी (जो कि बाद में श्री गुरु रामदास जी कहलाए) ने १५७३ ई में उस सरोवर का टक्क लगाया, जो कि श्री अमृतसर के नाम से विख्यात हुआ। यह पहला टक्क 'दुक्ख भंजनी' बेरी के पास लगाया गया। अगले वर्ष १५७४ ई में तृतीय पातशाह श्री गुरु अमरदास जी ज्योति-जोत समा गए। इस लिए श्री गुरु रामदास जी को सरोवर की सेवा का कार्य कुछ समय के लिए बंद करना पड़ा।

लगभग दो वर्ष के बाद श्री गुरु रामदास जी ने अमृत सरोवर की खुदवाई का कार्य पुन: आरंभ किया। श्री गुरु अमरदास जी के समय खुद यहां भाई जेठा जी के रूप में एक अनन्य सेवक तथा प्रवान हुए सिक्ख के रूप में आए थे किंतु अब चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी के रूप में आए। पहले जब यहां काम आरंभ किया गया तो आपके साथ बाबा बुड्ढा जी, भाई साल्हो जी तथा कुछ अन्य धैर्यवान सिक्ख ही साथ थे परंतु अब श्री गुरु रामदास जी के दर्शनों के लिए हज़ारों की संख्या में सिक्ख सेवक यहां आने लगे तथा सेवा में तन, मन व धन द्वारा योगदान डालने लगे।

श्री गुरु रामदास जी ने अपने समय में सरोवर की खुदाई संपूर्ण कर दी थी। इस बात की साक्षी भाई गुरदास जी की वारों में मिलती है:

पूरनु तालु खटाइआ
अंम्रितसरि विचि जोति जगावै। (वार १:४७)

एक तरफ 'चक्क गुरु' आबाद हो रहा था दूसरी तरफ सरोवर खुदवाया जा रहा था। लाहौर के कुछ सोढी क्षत्रिय भी जिनको उस समय सूबे ने उजाड़ दिया था, यहां आकर बस गए। जब यहां नगरी बसने लगी तो पहले वृक्षों के झुण्डों में कुछेक कोठे बनाए गए फिर कुछ पक्के मकान तथा दुकानें बन गईं। प्रकृति की गोद में यहां साधारण श्रद्धालु, मेहनती तथा कृति सिक्ख आकर बसने लग गए जो कि भिन्न-भिन्न व्यवसाय करते थे, वो गुरु जी के पावन चरणों में रहकर सेवा-सिमरन में समय व्यतीत करने लगे।

तब शायद गुरु के सिक्खों के ख़्याल में भी नहीं होगा कि यह 'चक्क गुरु' कभी एक बड़ा शहर बन जाएगा। सिक्खों का केंद्र ही नहीं बल्कि व्यापार की भी बहुत बड़ी मंडी बन जाएगी। आजकल भारतीय पंजाब का यह बहुत बड़ा शहर है, आबादी लगभग छ: लाख है। सिक्ख राज्य के समय श्री अमृतसर की आबादी लाहौर से भी ज्यादा थी। महाराजा रणजीत सिंघ जी यहां की तजारत की ओर विशेष ध्यान दिया। उस समय इस शहर का व्यापार सीधे रूप में रूस तक कायम था।

यह पावन स्थान यहां अमृत सरोवर बना; गुरु के महल आबाद हुए; गुरु बाज़ार बना। एक महान आत्मिक, सामाजिक एवं व्यवहारिक स्थान बन गया।

श्री अमृतसर सिक्खों की ज़िंद-जान है। आधे से ज्यादा सिक्ख इतिहास श्री अमृतसर के गिर्द घूमता है। इस गुरु की नगरी ने श्री गुरु रामदास जी के समय से लेकर अब तक कई उतार-चढ़ाव देखे हैं। सिक्खों की नित्यप्रति की अरदास का भी अभिन्न अंग है।

अनुवादक : गुरप्रीत सिंघ 'भोमा'

Final

भाई गुरदास जी की दृष्टि में श्री गुरु रामदास जी

*-स. गुरदीप सिंघ**

श्री गुरु रामदास जी सिक्ख गुरु साहिबान की शृंखला में चौथे (चतुर्थ) शोभायमान मोती थे, जिन्होंने परम-धर्म-साधना द्वारा प्राप्त पारब्रह्म की प्रचंड ज्योति द्वारा सम्पूर्ण वातावर्ण जहां प्रकाशमान कर दिया, वहीं मोह-माया के अंधकारों में भटक रहे जीवों को स्वार्थ में विचरते, प्रमार्थ का उत्तम मार्ग दिखाया। वह वास्तव में सांप्रदायक संकीर्णता से ऊपर उठकर, एक महान सहज साधक थे। उनकी साधना कर्मकाण्डों से मुक्त, पूजा विधियों से रहित, तर्क-वितर्क के प्रभाव से दूर एक ऐसी स्वतंत्र जीवन-जांच थी, जिसकी धर्म, देश, जाति, संप्रदाय और वर्गीय-बंटवारे की सीमाएं अपने आगोश में न रख सकीं। उनकी साधना परंपरागत प्रचलित धार्मिक रूढ़ियों की हदबंधी से बाहर निकलकर जनमानस में आ विराजमान हुई।

सन् १५७१ ई में श्री गुरु रामदास जी जब गुरगद्दी पर विराजमान हुए तो उस समय भाई गुरदास जी अपनी प्रचारक-यात्रा समाप्त कर वापिस आए थे। रिश्तेदारी होने के कारण श्री गुरु रामदास जी उनके बहनोई थे। भाई गुरदास जी और भाई जेठा जी श्री गुरु अमरदास जी के विश्वासपात्रों में प्रमुख थे। इन दोनों की परस्पर गहन मित्रता भी थी। भाई जेठा जी गुरगद्दी प्राप्त कर जहां श्री गुरु रामदास जी बने वहीं भाई गुरदास जी के गुरु भी बन गए थे। भाई गुरदास जी ने श्री गुरु रामदास जी पर पूर्ण भरोसा प्रकट किया। भाई संतोख सिंघ जी के अनुसार, जब भाई गुरदास जी श्री गुरु रामदास जी की शरण में पहुंचे तो अपने आपको गुरु जी के समक्ष समर्पित करते हुए विनती की :

मो कउ सिक्खी देहु महानी।

(गुर प्रताप सूरज ग्रंथ)

कुछ विद्वानों ने इस पंक्ति के भावार्थ को अपने तरीके से प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार जिस तरह इस पंकित से प्रतीत होता है कि भाई गुरदास जी ने गुरसिक्खी की दात श्री गुरु रामदास जी से मांगी है। इस पंक्ति का निर्णय करते हुए भाई कान्ह सिंघ नाभा अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि भाई गुरदास जी गुरु जी के सच्चे सिक्ख और बीबी भानी जी के नज़दीकी भाई थे। इन्होंने श्री गुरु रामदास जी से १६३६ ई में सिक्ख धर्म धारण किया और गुरबाणी का सिद्धांत पंचम गुरु से समझा। परंतु यह बात कोई इतनी यथार्थ नहीं लगती कि वह एक गुरु से सिक्खी धारण करे तथा दूसरे गुरु से गुरबाणी सिद्धांत का ज्ञान प्राप्त करें। सिक्खी धारण करना ही गुरबाणी के सिद्धांत का ज्ञान प्राप्त करना है। इन दोनों में कोई अंतर नहीं बल्कि आपस में अंर्तसम्बंधित है। भाई वीर सिंघ जी ने इस पंक्ति के सम्बंध में अपने विचार प्रकट किए हैं जो बहुत निर्णयकारी लगते हैं। वह लिखते हैं कि बहुत से लेखकों ने समझा है कि भाई गुरदास अब तक सिक्ख नहीं थे और श्री गुरु रामदास जी से सिक्ख बनते हैं। परंतु

**३०२, किदवाई नगर, लुधियाना-१४१००८; फोन : +९१९८८८१२६६९०*

देखो श्री गुरु रामदास जी भाई गुरदास जी को तत्काल ही आगरा की तरफ सिक्खी का प्रचार करने का हुक्म देते हैं :

सिमरहु वाहिगुरू सति नामू ॥
जा ते पावहु सुख बिसरामू ॥६१॥
अबि तुम आग्रै मांहि सिधावहु ॥

इन पंक्तियों से स्पष्ट भाव यह पता चलता है कि भाई गुरदास जी श्री गुरु अमरदास जी के समय सिक्खी धारण कर चुके थे अब आकर उन्होंने ने श्री गुरु रामदास जी में वही ज्योति देखी तो निम्नलिखित पउड़ी उच्चारण की :

राग दोख निरदोखु है राजु जोग वरतै वरतारा।
मनसा वाचा करमणा मरमु न जापै अपर अपारा।
दाता भुगता दैआ दानि देवसथलु सतिसंगु उधारा।
सहज समाधि अगाधि बोधि सतिगुरु सचु सवारणहारा।
गुरु अमरहु गुरु रामदासु जोती जोति जगाइ जुहारा।
सबद सुरति गुर सिखु होइ अनहद बाणी निझर धारा।
तखतु बखतु परगटु पाहारा ॥ (वार २४:१४)

इससे प्रतीत होता है कि भाई गुरदास जी को श्री गुरु रामदास जी में श्री गुरु नानक देव जी की ज्योति दिखलाई दी और सिक्खों की याचना की तथा नए सतिगुरु जी के समक्ष प्रथम गुरु की तरह सिक्ख मान लेने की अरदास की और गुरु जी द्वारा सतिनाम-वाहिगुरु का सिमरन करो, कहा जाना उनको सिक्ख स्वीकृत करने का आशीर्वाद था। अगर अब तक भाई गुरदास जी सिक्ख नहीं बने थे तो उसी समय 'शिक्षादाता' गुरमुख होकर आगू स्थापित कर तोर देना चाहे गुरु जी के समक्ष असंभव नहीं था परंतु हमेशा गुरमति में परिपक्व राय के प्रति ही आगे उपदेश करने की पद्दवी मिलती थी, बल्कि उसी समय प्रचार हेतु भेजा जाना दलील है, इस बात की कि उनकी सिक्खी और सिक्खों के प्रचार के गुण की प्रवीणता महत्त्वपूर्ण बात थी। तभी गुरु जी उसी समय भाई जी को आगरा भेज देते हैं।

भाई गुरदास जी जब श्री गुरु अमरदास जी की निगरानी तले पले, शिक्षा ग्रहण की, गुर-मर्यादा का पाठ पढ़ा, गुरु-घर की लगन से सेवा की, गुरु-घर का उत्तरदायित्व (जिम्मेदारी) निभाया तो फिर पीछे सिक्ख न बनने वाली कौन-सी बात रह जाती है? इस पंक्ति द्वारा तो वह अपनी नम्रता प्रकट कर अच्छे जीवन का वरदान मांगते हैं। भाई गुरदास सिक्खी को 'खंनिअहु तिखी' और 'बिखम मार्ग' बताते हैं। इसलिए वह अपने आप को भी सिक्खी के मार्ग का पथिक समझते हैं, आगू नहीं। भाई संतोख सिंघ 'गुर प्रताप सूरज' में लिखते हैं, कि श्री गुरु अरजन देव जी जब गुरगद्दी पर विराजमान हुए तो उनको मिलते समय भी भाई गुरदास जी ने ऐसे ही विचार प्रकट किए थे।

श्री गुरु रामदास जी सन् १५७४ ई से १५८१ ई तक सात वर्ष गुरगद्दी पर विराजमान रहे। भाई गुरदास जी चाहे आगरा की तरफ प्रचार-यात्रा पर रहे परंतु बीच-बीच में कभी गुरु जी को आकर मिल जाते। इस तरह भाई गुरदास जी यहां अपनी प्रचार मुहिम की प्रगति की जानकारी देते वहीं साथ-साथ गुरु-घर के कार्य, अन्य मामलों में भी अपना योगदान डालते। प्रो सरदूल सिंघ लिखते हैं :

"श्री गुरु रामदास जी के गुरिआई के सात वर्षों में भाई साहिब जी ने छोटी-बड़ी कई उदासियां की। आपको दिन-रात सेवा एवं बाणी एकत्र करने की लगन थी। भाई साहिब बहुत कम कहीं बैठे है, कोई दुनियावी बंधन नहीं था।

अपने आप को प्रभु-भक्ति में लीन कर चुके थे। गुरु-घर के प्रत्येक प्रबंध में स्वयं हिस्सेदार होते थे। इमारतों के नक़्शों में भी आपका मश्विरा लिया जाता था।" इसके साथ ही जब 'गुरु के चक्क' के अंदर आबादी करने का उद्दम आरंभ किया तो पूरी सरगर्मी के साथ कार्य निभाने के लिए पांच मुख्य सिंघों की कार्यकारिणी बनाई गई। भाई गुरदास जी भी इस पंचायत में थे। लोक सेवा संयुक्त धर्म कार्य में भाई जी ने तन-मन से सेवा की। पास के नगर-गिरायों में घूमकर प्रत्येक कार्य और व्यवसाय माहिरों, व्यापारियों, सौदागरों आदि को इस बस्ती में आकर आबाद होने के लिए प्रेरित किया। गलियों-बाज़ारों के नक्शे निर्मित किए। गुरु साहिब की युक्ति से मूज़ब ताल श्री हरिमंदर साहिब सुधारा। भाई गुरदास जी लिखते हैं श्री गुरु रामदास जी श्री अमृतसर में पूर्ण ताल खुदवाकर ईलाही ज्योति को जगमगाने लगे :

दिचै पूरबि देवणा जिस दी वसतु तिसै घरि आवै।
बैठा सोढी पातिसाहु रामदासु सतिगुरू कहावै।
पूरनु तालु खटाइआ अंम्रितसरि विचि जोति जगावै।
उलटा खेलु खसंम दा उलटी गंग समुंद्रि समावै।
दिता लईए आपना अणिदिता कछु हथि न आवै।
(वार १:४७)

कलयुग में यह गुरमुख लोगों को जगाने वाला दीन-दुनिया के स्तंभ संसार के बोझ को सहन करने वाला बाबाणै (श्री गुरु नानक देव जी) के वंश में यह पवित्र अस्पर्ष कमल था :

पीऊ दादे जेवेहा पड़दादे परवाणु पड़ोता।
गुरमति जागि जगाइदा कलिजुग अंदरि कौड़ा सोता।
दीन दुनी का थंमु हुई भारु अथरबण थंम्हि खलोता।
भउजलु भउ न विआपई गुर बोहिथ चड़ि खाइ न गोता।
अवगुण लै गुण विकणै गुर हट नालै वणज सओता।. . .
मैला कदे न होवई गुर सरवरि निरमल जल खोता।
बाबाणै कुलि कवलु अछोता॥ (वार २४:१५)

भाई गुरदास जी गुरु जी की प्रशंसा करते हुए लिखते हैं कि गुरु और परमेश्वर एक रूप है, इनमें कोई अंतर नहीं। ब्रह्म से नीचे मनुष्य का साकार आश्रय सतिगुरु है। इसके लिए गुरु की महानता अगंम है, क्योंकि लाखों शेषनाग, लाखों ही ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश देवते अलख परमात्मा के भेद नहीं जान सके। लाखों गोरखनाथ और मछंदर जैसे साधक उसका नेति नेति कर चिंतन करते हैं और यह सभी कहते हैं कि गुरु के चरण कमल अगंम है तथा उनका भेद पा लेना कठिन है :

१) सतिगुरु पूरा साहु है त्रिभवण जगु तिस दा वणजारा।
रतन पदारथ बेसुमार भाउ भगति लख भरे भंडारा।
पारिजात लख बाग विचि कामधेणु दे वग हजारा। (वार २६:२२)

२) सेख नाग लख लोमसा अबिगति गति अंदरि लिव लावहि।
ब्रहमे बिसनु महेस लख गिआनु धिआनु तिलु अंतु न पावहि।
देवी देव सरेवदे अलख अभेव न सेव पुजावहि।
गोरख नाथ मछंद्र लख साधिक सिधि नेत करि धिआवहि।
चरन कमल गुरु अगम अलावहि॥(वार २३:११)

स. रणधीर सिंघ की खोज के अनुसार भाई साहिब १५७७ ई में श्री गुरु रामदास जी के हुक्म अनुसार कश्मीर में प्रचार करने के लिए भी गए और वहां भाई माधोदास को प्रचार की मंजी

बख़्शकर फिर वापिस श्री अमृतसर आ गए। ३० सितंबर, १५७८ ई में अकबर बादशाह ने आगरा में 'सर्व-धर्म सम्मेलन' करवाया था, उसमें श्री गुरु रामदास जी ने भाई गुरदास को ही अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजा था। इस बात की गवाही अकबर के सरकारी दस्तावेज़ से भी प्राप्त होती है। अकबर ने जो सांझा 'दीन-ए-इलाही' बनाया, वह गुरु साहिबान के मत्त से बहुत मिलता है। यह प्रभाव भाई गुरदास जी के विचारों के कारण ही था।

जब श्री गुरु रामदास जी ज्योति-जोति समाये तो भाई गुरदास जी उस समय आगरा में थे। ख़बर सुनकर संगत सहित गोइंदवाल साहिब की तरफ रवाना हुए। कहते हैं कि जब ब्यास दरिया के किनारे पहुंचे तो पार होने के लिए नाव न मिली। गुरु दर्शन की प्रबल इच्छा हो रही थी। संगत मे एक सिक्ख यह शबद पढ़ रहा था :

गुर का बचनु बसै जीअ नाले ॥
जलि नही डूबै तसकरु नही लेवै भाहि न साकै जाले ॥ (पन्ना ६७९)

शबद से भाई साहिब को प्रेरणा मिली। बहुत विश्वास के साथ आप संगत सहित दरिया में कूद गए और तैरकर पार हो गए जब श्री गोइंदवाल साहिब पहुंचे तो बच्चे बाहर खेल रहे थे। खेलते-खेलते एक बच्चा कह रहा था कि 'गुरु भावे तां ऐउं ही होवेगा।' बच्चों का गुरु के प्रति इस तरह का विश्वास सुनकर आपके भीतर श्रद्धा भर आई। बच्चों की तरफ सिर झुकाया और गुरु परिवार से मिले। वहां से रामदासपुर (श्री अमृतसर) गए तथा श्री गुरु अरजन देव जी के दर्शन किए। ❁

कविता

शुक्र है परमात्मा!

पात्रता है ज्यादा, मिला हमें कम है।
इसी सोच ने हमारे, रंग में डाला भंग है।
अहंकार हमारा बड़ा, विनम्रता बड़ी कम है।
मांगें हमारी ज्यादा, शुक्राना बड़ा कम है।
ईर्ष्या, द्वेष को हम, हृदय से मिटा दें।
मन में अपने प्रेम की, ज्योति जगा दें।
मन में घर कर जाए, यह नेक इरादा।
पात्रता हमारी कम है, मिला है हमें ज्यादा।
ईश्वर हमारे पर तब और रहमत करेगा।
सब्र-संतोष से हमारी, झोलियां भरेगा।
मुश्किलों-मुसीबतों का अगर, करना है खातिमा।
हर पल कहते रहो, शुक्र है परमात्मा!
श्वास-ग्रास आवाज़ निकले, शुक्र है परमात्मा!
तेरा दिया भोग रहे हैं, शुक्र है परमात्मा!

-डॉ मनजीत कौर, २/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, फोन : ९९२९७-६२५२३

बाबा बुड्ढा जी का संक्षिप्त जीवन-परिचय

*-भाई निशान सिंघ गंडीविंड**

अपार गुरु-बख़्शिशों के पात्र बाबा बुड्ढा जी 'नाम जपो, किरत करो, वंड छको' जैसे श्रेष्ठ उपदेशों के धारक, तीक्ष्ण बुद्धि और परोपकारी जीवन वाले शिरोमणि सिक्ख थे। आपका जन्म गांव कत्थूनंगल, ज़िला श्री अमृतसर के ज़मींदार भाई सुग्घा जी के गृह में माता गौरां जी की कोख से ७ कार्तिक संवत् १५६३ को हुआ। माता-पिता ने आप जी का नाम 'बूड़ा' रखा।

बाबा जी की आयु मात्र पांच वर्ष के लगभग थी, जब उनके पिता भाई सुग्घा जी रावी नदी के नज़दीक गांव रमदास में आ बसे। आप जी अपने माता-पिता के घर-बार के काम-काजों में हाथ बंटाने लगे। जरा बड़े हुए तो आप अपने कुछ सियानी उम्र के साथियों के साथ पशु चराने चले जाते और अपने हमजोलियों को अपने माता-पिता से सुनी श्री गुरु नानक देव जी महाराज की उपमा बहुत प्यार एवं वैराग्य से सुनाते।

आत्मिक मौत मर चुके लोगों को नाम-अमृत की दात दे, सजीव करते-करते धन्य श्री गुरु नानक देव जी अपने साथी भाई मरदाना जी के साथ करतारपुर (पाकिस्तान) से रावी पार करके एक वृक्ष की घनी छांव तले आसन लगाए बैठे थे। यहीं पर (रमदास नगर के बाहर) बाबा बुड्ढा जी का प्रथम मिलन गुरु पातशाह जी के साथ हुआ। गुरु जी के साथ कुछ वचन-विलास करने के पश्चात आप जी ने गाय का दूध गुरु महाराज के चरणों में भेंट किया और आंखों में प्यार के आंसू उमड़ आए। गुरु जी ने दूध का सेवन करते हुए कृपालु दृष्टि के साथ देखते हुए पूछा, "हे बालक बूड़े! तू हमसे क्या वस्तु ढूंढता व चाहता है?" गुरु जी का वचन सुनकर बाबा जी ने विनती की, "पातशाह जी! जन्म-मरण का चक्र काटो।" जब गुरु पातशाह ने पूछा कि "बेटा! यह बतला कि यह भय तेरे मन में कहां से उपजा है?" तो आप जी ने बहुत वैराग्य भाव से बताया कि "महाराज! एक बार पठानों की सेना की टुकड़ी हमारे ग्राम में उतरी और वो सभी फ़सलें काट कर ले गई। मैंने देखा कि उस सेना ने पक्की के साथ कच्ची फ़सल भी काट ली। उस सेना के आगे किसी का कोई वश न चला। यूं मन में विचार आया कि क्या पता मृत्यु का ज़ालिम हाथ हमें कब आ दबोचे!"

बारह वर्ष के बालक के मुख से इतनी बड़ी बात सुनकर सतिगुरु जी बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे, "यूं तो चाहे उम्र तेरी बालकों वाली है परंतु ज्ञान और सूझबूझ के पक्ष से तू बूढ़ा है।" फिर गुरु नानक पातशाह ने बाबा (बूड़ा) जी को सिर पर प्यार देकर उपदेश दिया, "बुड्ढा जी! ध्यान प्रभु-चरणों के साथ लगाए रखना। सतिनाम का जाप करते हुए कादर तथा कुदरत के साथ एकसुर होकर चलना। सेवा-सुमिरन के साथ-साथ धर्म की किरत करना और बांटकर खाना।" सतिगुरु जी की तरफ से आप जी को प्यार से 'बुड्ढा' कहकर बुलाने के कारण संगत भी आप जी को बाबा बुड्ढा जी कहकर पुकारने लग गई और

**ग्रंथी, गुरुद्वारा बीड़ बाबा बुड्ढा जी, ठट्ठा (श्री अमृतसर) फोन : +९१९७८१९-८४१८४*

तब से आज तक सभी बाबा बुड्ढा जी पुकारते आए हैं एवं पुकार रहे हैं।

जब सतिगुरु जी वापिस करतारपुर चले गए तो बाबा जी अपने प्रिय माता-पिता के साथ घर-बार का कामकाज संभालकर प्रतिदिन गुरु-दरबार में उपस्थित होते और धर्मसाल में हर प्रकार की सेवा मन लगाकर करते। आप नाम-सुमिरन के रंग में रंगे कभी न थकते और न ही उत्साह में कभी आने देते। सन् १५१९ में धर्म प्रचार पर जाते वक्त गुरु जी बाबा जी को धर्मसाल की सेवा-संभाल सौंपकर चलने लगे तो आप जी ने गुरु जी के चरणों पर नमन कर के विनती की, "पिता जी! मैं तो आप जी के दर्शन किए बिना नहीं रह सकता, अब . . .?"

गुरु जी ने अपने प्रिय सिक्ख को प्यार-आशीष देते हुए वचन किया, "बुड्ढा! तुम्हारी नज़रों से ओझल नहीं हूंगा।" जितनी देर तक गुरु जी प्रचार यात्रा से वापिस न आ गए उतनी देर बाबा जी सिक्ख संगत को सिक्ख-सिद्धांत और गुरु-शिक्षाएं बड़े प्यार-सत्कार के साथ सुनाते-समझाते रहते।

आप जी का विवाह बीबी मिरोआ जी के साथ 'अचल' नामक गांव में हुआ। इनकी कोख से चार सुपुत्रों (भाई सुधारी जी, भाई भिखारी जी, भाई महिमू जी तथा भाई भाना जी) ने जन्म लिया। माता-पिता जी के अकाल देश को गमन करने के पश्चात् बाबा बुड्ढा जी ने पारिवारिक/सांसारिक जिम्मेदारियां निभाने के साथ-साथ सेवा-सुमिरन की ऐसी कमाई की जिसको देखकर संगत आप जी को गुरु जी का 'हजूरी सिक्ख' कहने लग गईं परंतु आप स्वयं को गुरु-घर का तुच्छ सेवक कहलवाकर आनंद-प्रसन्न रहते, कभी भी स्वयं पर अहंकार की छींट न पड़ने देते। गुरु जी की निगाहों में इतने सत्कार के पात्र हो गए थे कि जब धन्य श्री गुरु नानक देव जी, भाई लहिणा जी को गुरिआई प्रदान करने लगे तो गुरु जी ने बाबा बुड्ढा जी से गुरिआई की रस्में करवाकर भरपूर सम्मान बख़्शिश किया। यह स्मरण रहे कि गुरिआई की रस्में निभाने का सौभाग्य आप जी को दूसरे पातशाह से लेकर छठम् पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी तक प्राप्त हुआ।

पहले पातशाह जी के ज्योति-जोति समाने के कारण और दूसरे पातशाह जी द्वारा गुप्तवास पर चले जाने के कारण सिक्ख संगत व्याकुल हुई। संगत बहुत वैराग्य करे। कुछ सिक्ख बाबा जी के घर रमदास गए। गुरु जी से बिछुड़ी हुई संगत के मन की स्थिति बताकर विनय की, "बाबा जी! आपको सतिगुरों की ओर से 'बुड्ढा! तेरी नज़रों से ओझल न हूंगा' की प्यार-भरी आशीष प्राप्त है। अत: कृपा करके बिछुड़ी हुई संगत का दूसरे पातशाह के साथ मिलन करा दीजिए।" यह सुनकर बाबा जी बोले, "आओ भाई! अरदास करें। हमारी अरदास हमें ले चलेगी सुनने वाले के पास।"

अरदास करने के बाद बाबा जी सिक्खों के साथ भाई निहाला जी के गृह खडूर साहिब पहुंच गए। माता विराई जी के साथ सुख-समाचार की सांझ पाकर हवेली के कोने में बने कच्चे कोठे के पास गए और जब द्वार खोला तो सामने धन्य श्री गुरु अंगद देव जी, पारब्रह्म परमेश्वर के चरणों में ध्यान जोड़े बैठे थे। गुरु-संवारे बाबा जी ने अंदर जाकर शीश गुरु-चरणों में रखा। जब सतिगुरु जी के प्यारे सिक्ख के होंठ हिले तो वैराग्य में गूंथी मीठी प्रिय आवाज़ आई :

जिसु पिआरे सिउ नेहु तिसु आगै मरि चलीऐ ॥
(पन्ना ८३)

बाबा जी ने वैरागी मन के साथ विनती

की "सतिगुरु! आप जी से बिछुड़कर संगत बिलखती रही है। कृपा के भंडार सतिगुरु जी! लगाओ दर्शनों की छहबर।" यह सुनकर गुरु जी के पवित्र मुख से आवाज़ आई, "बाबा जी! मैं, न तुझसे और सिक्ख संगत से जुदा हूं।" श्री गुरु अंगद देव जी ने कोठे से बाहर आकर सभी संगत को दर्शन-उपदेश बख़्शकर सुख प्रदान किया।

श्री गुरु नानक देव जी के साहिबज़ादों ने रावी दरिया के किनारे गुरु-पिता की यादगार बनाने के समय आप जी से नींव रखवाई, जहां आज डेरा बाबा नानक नगर बसा हुआ है। श्री गुरु अंगद देव जी ने गुरमुखी लिपि/पंजाबी भाषा को न्यारी, उच्च-स्तरीय एवं सुगम जानकर इसका प्रचार प्रारंभ किया। बाबा जी गुरु-हुक्म के अनुसार खडूर साहिब में और अपने नगर रमदास में गुरमुखी लिपि/पंजाबी भाषा पढ़ाने-लिखाने की सेवा मन लगाकर करते रहे।

श्री गुरु अंगद देव जी की ओर से जब श्री गुरु अमरदास जी को गुरिआई दी गई तो गुरु-सुपुत्रों ने इसका तीक्ष्ण विरोध किया। एक दिन ईर्ष्या से ग्रस्त भाई दातू जी ने गुरु-दरबार गोइंदवाल साहिब आकर गुरु जी को पैर से ठोकर मार दी और साथ ही अपमानजनक शब्द भी बोले। यह देखकर संगत रोष में आई परंतु गुरु जी का संकेत समझकर शांत हो गई। उसी रात गुरु जी चुपचाप एकांत में चले गए। इस प्रकार संगत एक बार फिर सतिगुरों से बिछुड़ गई। जुदाई में व्याकुल हुए कुछ सिक्खों ने बाबा जी से गुरु जी के दर्शन करवाने के लिए विनती की। परोपकारी बाबा बुड्ढा जी अपने नगर से सिक्खों के साथ गोइंदवाल साहिब आए। गुरु जी को ढूंढने के लिए चलने से पूर्व अरदास की। यह भी कहा, "भाई! गुरु पातशाह जी की घोड़ी खोल दो। मेरे मालिक ने सवारी करके आना है।" संगत सहित गुरबाणी पढ़ते हुए बाबा जी गांव बासरके गिल्लां (श्री अमृतसर) में एक कच्चे कोठे के पास गए। कोठे के द्वार पर इस भाव का वचन लिखा हुआ था:

आइ इहां दर पारहि जोऊ।
हम नहिं गुरू सिक्ख नहिं सोऊ।

(गुर प्रताप सूरज, पृष्ठ १४६१)

श्रेष्ठ बुद्धि के मालिक बाबा बुड्ढा जी ने गुरसिक्खों से खुर्पा आदि औज़ार मंगवाए और पूरब दिशा से सेंध लगाकर अंदर प्रवेश होकर शीश गुरु-चरणों में जा रखा। गुरु जी ने बाबा जी की ओर देखकर वचन किया कि-

किमि तैं टारयो हुकम हमारा?

(सूरज प्रकाश ग्रंथ)

तब बाबा जी ने तत्काल हाथ जोड़ विनय की :

श्री गुरु! हम नहिं आइसु टारी।
तजि दर, फोरयो द्वार पिछारी।

(सूरज प्रकाश ग्रंथ)

जाननहार सतिगुरु जी! जुदाई में वैराग्य कर रही, गुरु-प्रेम के रंग में रंगी संगत को दर्शन-उपदेश बख़्शकर शीतलता बख़्शिश करो। दर्शन-उपदेश हेतु व्याकुल मनों को शीत कीजिए।

सुनति भए श्री अमर प्रसंन।
कहयो ब्रिद्ध को तुम बहु धंना।

(सूरज प्रकाश ग्रंथ)

सतिगुरु जी ने कोठे में से बाहर आकर सभी संगतों को दर्शन-उपदेश देकर खुशियां बख़्शीं। यहां आज गुरुद्वारा सन्न साहिब सुशोभित है। गोइंदवाल साहिब में श्री गुरु अमरदास जी के समय गुरु जी की तरफ से 'बाउली' के निर्माण के अवसर पर खुदाई के समय का यूं विवरण मिलता है:

सुथल जानि गुरु इसथित भए।

Final

टक लावनि की आइसु दए।
बुड्ढे प्रथम कही कर गही।
जहिं गुर कही तिरथ करि सही ॥८॥
तहिं ते माटी लीनि उपाटी।
भरी टोकरी सिर धरि साटी।
बहुरो सकल सिक्खय लगि परे।
धरे चौंप सेवा हित करे ॥९॥

(गुर प्रताप सूरज ग्रंथ)

तीसरे पातशाह के दरबार गोइंदवाल साहिब में दर्शन करने आए बादशाह अकबर की तरफ से श्रद्धालु रूप में परगना झबाल के १२ ग्रामों की जागीर प्रेम सहित भेंट की गई थी। उसकी सेवा-संभाल गुरु जी की ओर से बाबा जी को बख़्शी गई। आप जी ने यहां संगत-पंगत की प्रथा चलाने के साथ-साथ बच्चों और बड़ों को गुरमुखी लिपि/पंजाबी भाषा पढ़ाने-सिखलाने की सेवा की। इस स्थान पर एक बड़ी अथवा छोटा वन था। बाबा जी के अधिक समय यहां रहने के कारण इस स्थान का नाम 'बाबे की बीड़' पड़ गया, यहां आजकल गुरुद्वारा बाबा बीड़ साहिब सुशोभित है। सन् १५७३ में बाबा जी की सुपत्नी बीबी मिरोआ जी परलोक गमन कर गए। तीसरे पातशाह के हुक्मानुसार श्री गुरु रामदास जी की ओर से चक्क रामदासपुर (श्री अमृतसर) बसाने के समय जल की आवश्यकता को मुख्य रखते हुए सरोवरों आदि की खुदाई करवाई गई और अमृत-सरोवर के मध्यस्थ पंचम पातशाह की तरफ से श्री हरिमंदर साहिब के भवन के निर्माण के वक्त बाबा जी ने जहां अपने हाथों के साथ बहुत सेवा की वहां आई संगतों को प्रभु-यश, गुरु-यश सुनाकर भी निहाल किया। जिस बेरी के नीचे बाबा जी बैठकर संगतों से सेवा करवाते एवं प्रभु सिमरन का जाप करते वह बेरी आज भी सचखंड श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर सरोवर की परिक्रमा में सुशोभित है।

श्री गुरु रामदास जी की तरफ से जब अपने छोटे सुपुत्र श्री (गुरु) अरजन देव जी को गुरिआई देने के समय उनके बड़े पुत्र प्रिथी चंद की तरफ से विरोध हुआ तो बाबा जी ने प्रेम सहित तर्क के साथ उसको बहुत समझाया।

बाबा बुड्ढा जी ने भाई गुरदास जी और अन्य चुनिंदा सिक्खों को साथ लेकर प्रिथी चंद के काले-कारनामों और उसकी तरफ से गुरु-घर के विरुद्ध बोले जा रहे कोरे झूठ से संगत को अवगत कराकर, सत्य-धर्म की ज्योति गुरु साहिब से जोड़कर गुरु पातशाह जी की आशीष प्राप्त की। पंचम पातशाह के हुक्म के अनुसार आत्मिक और शारीरिक ज्ञान की सोझी रखने वाले बाबा बुड्ढा जी ने सूबेदार वज़ीर खां का जलोधर रोग ठीक किया।

पंचम पातशाह के महिल माता गंगा जी जब बीड़ बाबा बुड्ढा साहिब (झबाल) में गुरु का लंगर (मिस्से परशादे, प्याज, छाछ आदि) लेकर आये तो बाबा जी अत्यंत प्रसन्न हुए और परशादा छकने से पूर्व प्रभु-चरणों में धन्यवाद के रूप में अरदास करते हुए विनय की, "हे पातशाह जी! माता जी को महाप्रतापी सुपुत्र दो, जो प्याज को फोड़ने की भांति ज़ालिमों के सिर फोड़े।"

दातार प्रभु ने कृपा में आकर श्री गुरु अरजन देव जी के घर माता गंगा जी की पावन कोख से जन्म लेने के लिए बालक (श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब) को भेजा। बाबा जी बालक (गुरु) हरिगोबिंद साहिब जी के दर्शन करने नगर 'गुरु की वडाली' गए। पंचम पातशाह का हुक्म मान कर बाबा जी ने बालक को अपनी गोद में ले, नाम-संस्कार करके नाम 'हरिगोबिंद' रखा। प्रभु-बख्शिश कर धन्यवाद करते हुए समाज-कल्याण और जल की

आवश्यकता को मुख्य रखकर पंचम पातशाह ने गुरु की वडाली की पश्चिम-उत्तर दिशा की तरफ बाबा बुड्ढा जी से टक्क लगवाकर छ: माहलों वाले बड़े कुएं का निर्माण किया। (अब यहां गुरुद्वारा छेहरटा साहिब सुशोभित है और यहां बसे नगर का नाम 'छेहरटा' है)।

पंचम पातशाह ने अपने बड़े भाई बाबा महादेव जी के साथ परामर्श करके बालक (गुरु) हरिगोबिंद साहिब को अक्षर-विद्या, शस्त्रों का प्रशिक्षण, घुड़सवारी, कुश्ती और शिकार करना जैसे गुणों आदि की शिक्षा देने की जिम्मेवारी बाबा जी को सौंप दी। गुरु जी के हुक्म का पालन करके आप जी ने खुशियां प्राप्त कीं। यहीं बस नहीं बल्कि कलयुगी जीवों का उद्धार करने हेतु श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी के संपादित व सम्पूर्ण होने पर पावन श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सेवा-संभाल, बाबा बुड्ढा जी को सौंपकर भाव प्रथम ग्रंथी स्थापित कर पहले से भी अधिक सम्मान प्रदान कर निहाल किया।

सत्य-धर्म हेतु शहीद होने के लिए जाते समय श्री गुरु अरजन देव जी की तरफ से किए हुक्म का पालन करते हुए बाबा बुड्ढा जी ने साहिबज़ादा (गुरु) हरिगोबिंद साहिब जी को श्री गुरु नानक देव जी की गद्दी के छठम् उत्तराधिकारी के रूप में स्थापित करने के समय सुंदर दसतार, कलगी सजाकर और दो कृपाणें पहनाकर नमन किया।

छठम् पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की तरफ से दुनियावी रियासतों के झूठे तख़्त के विरुद्ध सच्चे तख़्त श्री अकाल तख़्त साहिब की रचना करने के समय प्रारंभिक थड़े को बनाने की सेवा केवल बाबा बुड्ढा जी ओर भाई गुरदास जी को सौंपकर भरपूर सम्मान बख़्शा। बाबा जी ने 'चौंकी साहिब' की मर्यादा चलाई। भाई कान्ह सिंघ नाभा के अनुसार चौंकी से भाव है भजन मंडली, जो परिक्रमा करती हुई शब्द गायन करे।

डॉ. जसवंत सिंघ नेकी लिखते हैं, "जहांगीर बादशाह ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को ग्वालियर के किले में कैद किया हुआ था तो बाबा बुड्ढा जी तथा अन्य मुख्य सिक्खों की अगुवाई में सिक्ख संगत शबद चौंकी के रूप में ग्वालियर की तरफ चल पड़ीं। आगे-आगे निशान साहिब जो स्वतंत्रता का प्रतीक था, साथ मशालें थीं जो हकूमत को राह दिखाने की प्रतीक थीं।"

सन् १६३० ई में बाबा जी स्थाई तौर पर गुरु जी से आज्ञा लेकर अपने नगर रमदास आ गए। यहां आप संगत को गुरमति विचारधारा तथा गुरु साखियां सुनाकर निहाल करते और संगत को पूर्णत: गुरसिखी मार्ग अपनाने को प्रेरित करते। नज़दीक स्थित ग्राम मंदरांवाला के एक मुसलमान की आशंका दूर करते हुए बाबा जी ने बताया कि भाई! गुरु साहिब किसी भी धर्म का खंडन नहीं करते बल्कि किसी धर्म में फैली बुराइयां और सिद्धांतहीन बातों से, उस धर्म के साथ जुड़े लोगों को शुभ गुण बताकर जागरूक करते हैं। कई बार स्वयं को धार्मिक अगुआ तथा धर्म के पुजारी बताने वाले धर्म के पहरावे तले कूड़ कमाते हैं जो उनके जीवन में आई गिरावट है। गुरु साहिब उस गिरावट से सीधे-सादे लोगों को सुचेत करते हैं। गुरमति के अनेकों प्रमाण देकर उस आशंकाग्रस्त पुरुष की बाबा जी ने आशंका निवारण की।

हर वक्त प्रभु-सुमिरन में ध्यान लगाने वाले बाबा बुड्ढा जी का नाम सिक्ख-संगत और सर्वसाधारण लोगों में बहुत प्यार-सत्कार से लिया जाता है। आपका महान व्यक्तित्व और गुरु-घर में लंबी सेवा सिक्ख संगतों के लिए प्रेरणास्रोत है।

गुरु घर के समर्पित सेवक : बाबा बुड्‌ढा जी

-डॉ. राजेंद्र सिंघ 'साहिल'

बाबा बुड्‌ढा जी एक ऐसे अद्वितीय सिक्ख व्यक्तित्व हुए हैं, जिन्होंने आठ गुरु साहिबान के न सिर्फ साक्षात दर्शन किए बल्कि पांच गुरु साहिबान का अपने हाथों अभिषेक कर उन्हें गुरगद्दी पर विराजमान भी किया।

श्री गुरु नानक देव जी से भेंट : बाबा बुड्‌ढा जी का जन्म ७ कार्तिक संवत् १५६३ वि. तद्‌नुसार २२ अक्तूबर, १५०६ ई को श्री अमृतसर के निकट 'कत्थूनंगल' गांव में हुआ। आपके पिता का नाम भाई सुग्घा रंधावा और माता का नाम बीबी गौरां था। आपका बचपन कत्थूनंगल में गाय-भैंसें चराते हुए बीता। कुछ समय पश्चात् आपका पूरा परिवार एक अन्य गांव रमदास में आ बसा।

यहीं रमदास में आपका मिलाप श्री गुरु नानक देव जी से हुआ। इस समय आपकी उम्र मात्र १२ वर्ष थी। आप गुरु जी के पास गए और प्रार्थना की कि मेरा उद्धार करो। गुरु जी ने आश्चर्य से बालक को देखा और पूछा-- 'तू तो अभी बालक है, तुझे क्या दुख है? बालक ने उत्तर दिया-- 'महाराज हमारे गांव पर मुगलों ने आक्रमण किया था, कोई उनका हाथ नहीं पकड़ सका तो यम से कौन बचायेगा?

प्रथम पातशाह श्री गुरु नानक देव जी बालक की बातों से बहुत प्रभावित हुए और वचन किया कि तेरी मति बूढ़ों जैसी परिपक्व है, तू एक मन से नाम-सिमरन करेगा और तेरा कल्याण होगा। उसी दिन से आप बाबा बुड्‌ढा जी के नाम से प्रसिद्ध हो गए।

जब श्री गुरु नानक देव जी उदासियां (प्रचार यात्राएं) संपूर्ण कर करतारपुर में आ विराजमान हुए तब बाबा बुड्‌ढा जी भी गुरु-चरणों में आकर सेवा करने लगे। गुरु-आज्ञा एवं माता-पिता की इच्छा सिर माथे पर धारण कर बाबा बुड्‌ढा जी ने ब्रह्मचारी जीवन बिताने का निश्चय त्याग दिया और बीबी मिरोआ के साथ विवाह किया और गृहस्थ धर्म में प्रवेश किया। बाद में बाबा जी के घर चार पुत्रों का जन्म हुआ।

श्री गुरु अंगद देव जी की सेवा : सन् १५३९ ई में श्री गुरु नानक देव जी के ज्योति-जोत समाने के बाद द्वितीय पातशाह ने खडूर साहिब को केंद्र बनाया। बाबा बुड्‌ढा जी कुछ समय करतारपुर में ही रहे। प्रथम पातशाह के ज्योति-जोत समाने से श्री गुरु अंगद देव जी अत्यंत उद्वेलित हो गए और आत्मिक साधना में लीन होकर बीबी विराई के घर में जा विराजमान हुए। जब काफी समय तक संगत को द्वितीय पातशाह की कोई सूचना न मिली तो सिक्ख करतारपुर में बाबा बुड्‌ढा जी के पास आये और इस समस्या का हल निकाले जाने की प्रार्थना की।

बाबा बुड्‌ढा जी ने मालूम किया कि गुरु जी बीबी विराई के घर में हैं। आप माता विराई के घर पहुंचे और गुरु जी के सम्मुख सिक्ख संगत की प्रार्थना रखी। गुरु जी बाबा

*१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, फोन : +९१९४१७२-७६२७१

Final

बुड्ढा जी और संगत के प्रेम एवं आग्रह से प्रसन्न हुए और दर्शन देकर सबको निहाल किया।

इसके बाद बाबा बुड्ढा जी गुरु-आज्ञा के अनुसार खडूर साहिब में ही रह गये और गुरमुखी लिपि में विद्या देनी और लंगर में सेवा करनी आरंभ कर दी।

श्री गुरु अमरदास जी को मनाना : सन् १५५२ ई में द्वितीय पातशाह के ज्योति-जोत समाने के समय तृतीय पातशाह श्री गुरु अमरदास जी का 'गुरिआई तिलक' भी बाबा बुड्ढा जी के कर कमलों से ही संपन्न हुआ।

जब तीसरे पातशाह गोइंदवाल साहिब बसाकर वहां जा विराजमान हुए तो बाबा बुड्ढा जी भी खडूर साहिब से गोइंदवाल साहिब आ गए।

इन्हीं दिनों श्री गुरु अमरदास जी दूसरे पातशाह के पुत्रों दातू एवं दासू द्वारा गुरगद्दी पर अपना हक जताने से उठे विवाद के कारण निर्लेप होकर 'बासरके' गांव में चले गये और एक कोठे में दरवाज़ा बंद करके अंदर बैठकर प्रभु-सिमरन करने में लीन हो गये। गुरु जी ने यह वचन भी किया कि जो कोठे का दरवाज़ा खोलने-खुलवाने का प्रयास करेगा वह गुरु-द्रोही होगा।

ऐसे में बाबा बुड्ढा जी ने अत्यंत सूझ-बूझ से काम लिया और कोठे की पिछली दीवार में सेंध लगाकर अंदर चले गये। बाबा जी ने गुरु वचनों का सम्मान भी बचाये रखा और गुरु जी को मनाकर गोइंदवाल साहिब वापिस भी ले आये।

श्री गुरु अमरदास जी ने प्रसन्न होकर बाबा बुड्ढा जी से कहा- आप संगत के केवट हो जो उन्हें भव-सागर से पार उतारता है :

इह संगत को बोहिथ भारा।
भउजल ते करि है निसतारा ॥

(गुरु प्रताप सूरज ग्रंथ)

कुशल प्रबंधक : जब श्री गुरु अमरदास जी ने गोइंदवाल साहिब में 'बावली' का निर्माण आरंभ करवाया तो उसकी नींव बाबा बुड्ढा जी से रखवाई और बावली के निर्माण की सारी ज़िम्मेदारी भी बाबा जी को सौंप दी। बाबा बुड्ढा जी ने अत्यंत कुशलता के साथ इस कार्य को संपूर्ण कर अपनी प्रबंधन क्षमता का परिचय दिया।

इसी प्रकार तीसरे पातशाह ने सिक्खी के प्रचार-प्रसार हेतु २२ मंजियों की स्थापना की तो इनका मुख्य प्रबंधक बाबा बुड्ढा जी को ही बनाया।

अमृत सरोवर का निर्माण : सन् १५७४ ई में चतुर्थ पातशाह श्री गुरु रामदास जी के गुरगद्दी पर विराजमान होते समय उनका गुरिआई तिलक भी बाबा बुड्ढा जी के द्वारा ही किया गया।

जब चौथे पातशाह ने श्री अमृतसर नगर की स्थापना की तो 'अमृत सरोवर' की खुदाई का आरंभ बाबा जी से ही करवाया और निर्माण का सारा दायित्व भी बाबा जी को ही सौंप दिया। बाबा बुड्ढा जी परिक्रमा में एक बेरी के नीचे बैठकर काम-काज की देख-रेख किया करते थे। यह बेरी आज भी श्री हरिमंदर साहिब की परिक्रमा में मौजूद है और 'बेर बाबा बुड्ढा जी' के नाम से प्रसिद्ध है।

यही नहीं, बाद में पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री अमृतसर नगर और श्री हरिमंदर साहिब के निर्माण का समस्त कार्य भी बाबा जी को ही सौंप दिया।

माता गंगा जी को पुत्र प्राप्ति का आशीर्वाद : पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी सन्

Final

१५८१ ई में गुरगद्दी पर विराजमान हुए तो परंपरा अनुसार गुरिआई तिलक एक बार फिर बाबा बुड्ढा जी के हाथों से ही संपन्न हुआ।

पंचम पातशाह और माता गंगा जी के आनंद कारज को १४ वर्ष हो गए थे परंतु माता गंगा जी की गोद सूनी थी। ऐसे में प्रिथिआ और उसकी पत्नी करमो गुरगद्दी हथियाने के लिए नये-नये षड़यंत्रों में लगे रहते। अंतत: माता गंगा जी ने अपनी व्यथा गुरु-पति के सम्मुख प्रकट की।

पंचम पातशाह ने उन्हें बाबा बुड्ढा जी से आशीर्वाद लेने की सलाह दी। माता गंगा जी उच्च कोटि के पकवान बनवाकर, कई सेविकाओं सहित सज-धज के साथ रथ पर सवार होकर बाबा बुड्ढा जी के पास पहुंची परंतु बाबा जी ने माता जी पर विशेष ध्यान नहीं दिया और उन्हें खाली हाथ वापिस लौटना पड़ा।

जब पंचम पातशाह को यह प्रसंग पता चला तो आपने समझाया कि महापुरुषों के पास विनम्रता से जाया करते हैं। अब की बार माता गंगा जी ने स्वयं मिस्से परसादे बनाये, लस्सी रिड़की, ऊपर प्याज रखा और विनम्रता के साथ बाबा बुड्ढा जी के पास गये। बाबा बुड्ढा जी बोले, पंचम पातशाह स्वयं दिव्य ज्योति हैं, मेरी अरदास की क्या बिसात? बाबा जी ने माता गंगा जी द्वारा लाया गया लंगर छका और वर दिया-- 'आपके घर महाबलि, मीरी-पीरी का मालिक जन्म लेगा।'

तुमरे ग्रहि प्रगटेगा जोधा।
जा के बल गुन किनहूं ना सोधा ॥
(गुरु बिलास पा. छेवीं)

अकाल पुरख की कृपा से सन् १५९५ ई में माता गंगा जी की पावन कोख से श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी का प्रकाश हुआ। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के बाल्यकाल में शिक्षा आदि की सारी जिम्मेदारी भी बाबा बुड्ढा जी को ही सौंपी गई।

श्री हरिमंदर साहिब के प्रथम ग्रंथी : सन् १६०४ ई में पंचम पातशाह ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब का भाई गुरदास जी से लेखन सेवा का कार्य संपूर्ण करवाया। तत्पश्चात् १ सितंबर, १६०४ ई को 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' का श्री हरिमंदर साहिब में प्रथम प्रकाश किया गया। इस महत्त्वपूर्ण अवसर पर बाबा बुड्ढा जी को प्रथम ग्रंथी नियुक्त करके सम्मानित किया गया। बाबा जी ने पावन ग्रंथ में से पहला हुकमनामा लिया :

संता के कारजि आपि खलोइआ हरि कंमु करावणि आइआ राम ॥
धरति सुहावी तालु सुहावा विचि अंम्रित जलु छाइआ राम ॥ *(पन्ना ७८३)*

श्री अकाल तख़्त की स्थापना : शहादत हेतु लाहौर जाते समय पंचम पातशाह ने आज्ञा दी और बाबा बुड्ढा जी ने छठम् पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को गुरिआई का तिलक लगाया। पंचम पातशाह की शहादत के बाद आपने सिक्ख समुदाय को पुन:व्यवस्थित करने में विशेष भूमिका निभाई।

सन् १६०९ ई में छठम् पातशाह ने श्री अकाल तख़्त की स्थापना का निर्णय लिया तो इसकी नींव बाबा बुड्ढा जी से रखवाई। फिर छठम् पातशाह, भाई गुरदास एवं बाबा बुड्ढा जी ने मिलकर श्री अकाल तख़्त साहिब का निर्माण किया।

श्री अकाल तख़त साहिब के निर्माण के पश्चात् वहां दीवान सजाया गया। बाबा बुड्ढा जी ने छठम् पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को 'मीरी-पीरी' की दो कृपाणें धारण करवाईं।

(शेष पृष्ठ ३८ पर)

अरदास में केश दान का महत्त्व

-डॉ. जसवंत सिंघ नेकी*

केशों की धर्म के इतिहास में विशेष महानता है। यह वो पहचान है जिससे प्रकृति ने हमें सजाया है। पैदा होते ही ये एक पोशाक की तरह परमात्मा ने हमें पहनाए हैं।

'केश' शब्द का मूल धातु पाणिनी ने 'काश' बताया है, जिसका अर्थ है 'ज्योति'। इसलिए केश ज्योति को आकर्षित करने वाले माने गए हैं। यजुर्वेद के अनुसार "आरोग्यता, तेज़ तथा बल बढ़ाने के लिए केश होने आवश्यक हैं।" अथर्ववेद के अनुसार, "केश बोये नहीं जाते। इनको उखाड़ना या काटना वाज़िब नहीं, बल्कि केश धारण करके शक्ति व गर्व को बढ़ाना चाहिए।" यूं लगता है कि केश भारत की आध्यात्मिक संस्कृति का चिन्ह थे। सारे ऋषि, सारे मुनि केशधारी थे। मुंडन तो शोक की निशानी माना जाता था और आज भी है। महात्मा बुद्ध भी जब संसार से उपराम हुए तो राजपाट त्यागकर घर से निकल पड़े। पहले उन्होंने केश कटवा दिए, मगर जब वे ज्ञान प्राप्त करके लौटे तो उन्होंने पुन: केश धारण कर लिए। इस कारण केश ज्ञान का संकेत हैं।

केवल भारत में ही नहीं, सभी धर्मों के पीर-पैगंबर भी केशधारी थे। मुसलमानों के रसूल हज़रत मुहम्मद साहिब को गेसू-दराज़ (लंबे केश वाले) नाम से भी याद किया जाता है। आज भी आध्यात्मिक प्राप्ति वाले इंसान स्वाभाविक ही केशधारी हो जाते हैं।

यूं लगता है कि एक तरफ केश सदा से आध्यात्मिकता का चिन्ह माने जाते रहे हैं तो दूसरी तरफ केश-दाढ़ी मर्दानगी का, शूरवीरता का तथा निर्भयता का भी चिन्ह हैं। अच्छे केश सुंदरता, तेज़, शक्ति एवं स्वास्थ्य का प्रतीक माने गए हैं। सिंघों वाला स्वभाव पैदा करने के लिए सिंघों वाला रूप भी आवश्यक है।

इस प्रकार केश केवल भक्ति का ही नहीं, शक्ति का भी उचित प्रतीक हैं। जिस धर्म का उद्देश्य संत-सिपाहियों की फौज की सृजना करने का हो उसके लिए स्वाभाविक था कि वो केशों के आदिम प्रतिरूपक महत्त्व के साथ अपना सम्बंध जोड़ती। इस दृष्टि से सिक्ख धर्म में केशों की महत्ता का प्रवेश आवश्यक था। श्री गुरु नानक देव जी के समय से ही केशों के सम्मान की प्रथा शुरू हो गई। जब श्री गुरु नानक देव जी ने भाई मरदाना जी को उम्र भर का साथी बनने के लिए सहमत किया तो उससे कहा, "मरदानिआ! इन तीन बातों को पल्ले बांध ले-- एक, केश नहीं कटवाना, दूसरा, अमृत वेला नहीं त्यागना, तीसरा, आए-गए साधु-संतों-अतिथियों की सेवा प्यार से करनी।"

प्रतीत होता है कि केश रखने का आदेश श्री गुरु नानक देव जी के समय से ही हो गया था। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के समय केश सिक्खी रहित का आवश्यक अंग बन गए और केशों के कत्ल (काटने) को बज्जर कुरहित करार दिया गया।

यह भ्रम आम चला आ रहा है कि श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी से पहले केश रखने का आदेश कोई नहीं था। यह बड़ी निर्णायक बात है कि यह आदेश श्री गुरु नानक देव जी के समय ही प्रचलित हो गया था। इस बात के और भी

प्रमाण हैं। बहुत-सी उन जगहों पर, जहां पर श्री गुरु नानक देव जी द्वारा लगाए गए सिक्खी के पौधे (सिक्ख) अभी कायम हैं और जिनका संपर्क श्री गुरु नानक देव जी के बाद के गुरु साहिबान के साथ नहीं हुआ, उन गुरु नानक-नाम-लेवा सिक्खों के वंशज आज भी केशधारी हैं।

गुरबाणी में केश-दाढ़ी को शुद्ध आचरण का प्रतीक बनाने का आदेश है :

मुख सचे सचु दाड़ीआ सचु बोलहि सचु कमाहि ॥ (पन्ना १४१९)

श्री गुरु अरजन देव जी ने साबत सूरत रहने तथा सिर पर दसतार सजाने को महिमा योग्य जाना है :

. . साबत सूरति दसतार सिरा ॥ (पन्ना १०८४)

इस प्रकार केशों की महत्ता शुरू से ही चली आ रही है।

केशों पर आक्रमण भी गुरु साहिब के समय से ही शुरू हो गया था। मुगल हाकिमों के हाथ जो भी सिक्ख आता, उसे शहीद करने से पहले वे उसके केश कत्ल करने को प्राथमिकता देते थे। सिक्ख जान दे देते थे, केश नहीं देते थे। श्री गुरु तेग बहादर साहिब के सामने भाई मती दास जी, भाई सती दास जी तथा भाई दिआला जी को शहीद कर दिया गया। उन्होंने शीश दे दिया मगर केशों के सम्मान को आंच न आने दी। वे सिक्खी-सिदक केशों-श्वासों संग निभाते हुए शहीदियां प्राप्त कर गए।

प्रतीत होता है कि भक्ति एवं शक्ति का प्रतीक केश प्रथम गुरु साहिब के समय ही बन गए थे। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इनको अमृतधारी सिक्खों की बाहरी रहित का आवश्यक अंग बना दिया। सारे रहितनामे इस तथ्य की गवाही भरते हैं। केशों का किसी प्रकार का अपमान सिंघों को बुरा लगने लगा।

केशों की रहित के अनुसार सिक्ख परिभाषा में कुछ नए सांकेतिक शब्द प्रयोग किए जाने लगे। जो अमृत-पान करके रहितवान हो गए वे 'अमृतधारी सिक्ख' हुए। जो अमृत-पान करके केशों का अपमान कर बैठे उनको 'पतित' कहा जाने लगा।

यदि केशधारी सिक्ख कुरहितीआ हो जाए तो शोभाहीन समझा जाता था :

तिस कुरहितीए केस रखाए कहहु सु कैसे सोभा पाए ? (रहितनामा भाई देसा सिंघ)

बड़ी जल्दी ही यह प्रत्यक्ष होने लग गया कि यह धर्म छिप-छिपाकर नहीं जीया जा सकता। केश खालसे का 'नीसाण' हो गए। "जे लक्ख हिंदू अते लक्ख मुसलमान होवनि तां भी सिक्ख विच छुपदा नहीं, किउं जो हच्छा दाहड़ा, सिर पर केस, सो किथों छपै।" (यदि लाखों हिंदू तथा लाखों मुसलमान हों तो भी सिक्ख उनमें छिपता नहीं, क्योंकि खूबसूरत दाढ़ी, सिर पर केश, इसलिए कैसे छिपे?) *(साखी रहित की, भाई नंद लाल जी)।* केश 'गुरु की मुहर' तथा सिक्खी-सिदक का एलान भी हो गए और सिक्खों की पहचान भी, क्योंकि सिक्ख छिपा नहीं रह सकता था, अत: केश वालों की आचरणीय जिम्मेदारी बढ़ गई। उन पर केश-दाढ़ी का सम्मान बनाए रखने की जिम्मेदारी पड़ गई। इस प्रकार केशों की दात हमारे आचरण का झूलता निशान बन गई।

केश एक तरह से अपने मुरशिद का एलान भी हो गए। केश वालों को 'गुरु के सिक्ख' कहा जाने लगा। दाढ़ी-केश से इंकारी होकर सिक्ख अपने गुरु को छिपाता है। गुरबाणी के अनुसार तो :

जो गुरु गोपे आपणा सु भला नाही पंचहु ओनि लाहा मूलु सभु गवाइआ ॥ (पन्ना ३०४)

वास्तव में मुगल-काल में तो यह सरकारी हुक्म हो गया था कि बिना हाज़ियों के कोई दाढ़ी न रखे। सिक्खों को दाढ़ी-केश वाला बनाकर

सतिगुरु जी ने एक तरह की रहित की आज़ादी का एलान किया। श्री गुरु तेग बहादर साहिब का एलान था कि प्रत्येक को अपनी मर्ज़ी के अनुसार अपना धर्म ग्रहण करने का हक है। रहित की आज़ादी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की बख़्शिश है। केश, जो अब तक भक्ति तथा शक्ति का चिन्ह थे, आज़ादी का भी चिन्ह हो गए।

साधारणत: कोई भी सरकार अपनी प्रजा में आज़ादी का जज़्बा उभरता बर्दाश्त नहीं कर सकती। उसे इसमें से विद्रोह की गंध आने लग जाती है। यही कारण है कि जब केश पंथ की आज़ाद हस्ती का चिन्ह बन गए तो सरकार को खटकने लगे। तब से लगता है कि ये हर सरकार को खटकते आए हैं।

सर्वप्रथम ये मुगलों को खटके। उन्होंने केवल दाढ़ी-केश रखने की सरकारी रूप से मनाही ही नहीं की थी, केश वालों के सिर उतारने की मुहिम भी जारी की थी। सिक्खों के सिरों के इनाम रखे गए। लोगों ने सिक्खों के सिरों के मूल्य कमाये। सिक्खों ने भी सिर दे दिए, मगर केश न दिए। केश सिक्खी-सिदक का चिन्ह हो गए। अरदास में जहां केशों के दान की याचना होने लगी वहीं यह विनती भी अरदास का अंग हो गई कि *"सिक्खी केसां सुआसां संग निभे।"*

अब्दाली ने फूलकीआं मिसल के नेता सरदार आला सिंघ को गिरफ्तार कर लिया तो उसके केश कत्ल करने का हुक्म कर दिया। सरदार आला सिंघ की पत्नी ने एक लाख रुपए अब्दाली को देकर उनके केश बचाए। केश सिक्ख के लिए सबसे बड़ी दौलत थी और हैं। जब जीवन-दान की शर्त केश कटवाना हो गई थी तब भी स्वाभिमानी सिक्खों ने जान देनी स्वीकार की, केश कटवाना नहीं। इस प्रकार केश सिक्खी-स्वाभिमान का चिन्ह भी हो गए। केशों वाले सिंघों को 'सिरदार (सरदार) साहिब' कहा जाने लगा।

पहले अंग्रेज भी सिक्खों के विरुद्ध थे। पंजाब की लड़ाइयों में सिक्ख (अंदरूनी गद्दारों के कारण) भले ही हार गए थे मगर अंग्रेजों को उन्होंने अपनी शक्ति का एहसास भली प्रकार से करा दिया था। अंग्रेज भी सिक्खों को खत्म करना चाहते थे। उन्होंने भी बड़े-बड़े सिक्खों को ईसाई बनाकर सिक्खों को अपने धर्म से अलग करने का यत्न किया। नाबालिग महाराजा दलीप सिंघ को केशहीन करने के लिए सरकारी सुपुर्ददारी में विलायत भेज दिया। यह तो अंग्रेजों को बाद में एहसास हुआ कि सिक्ख बड़े शूरवीर फौजी हैं और उनकी शूरवीरता का राज मुख्यत: उनके केशधारी होने में है। तब उन्होंने एक सरकारी आदेश के द्वारा सिक्ख सरकारी कर्मचारियों को दाढ़ी-केश काटने से मना कर दिया।

आज़ाद भारत में भी केश वालों पर आक्रमण हुआ, जो १९८४ ई में प्रत्यक्ष रूप में प्रकट हुआ। फिर से सिक्खों में घल्लूघारों की याद ताज़ा हो गई। फिर से सिक्खों ने यह एहसास करवा दिया कि केश उनके कौमी-स्वाभिमान का चिन्ह हैं। केशों का अपमान करने वाला पुन: समूह पंथ को बदनाम करता प्रतीत होने लगा। धैर्यवान सिक्ख अपने इरादे पर दृढ़ रहते हुए शहीदियां प्राप्त कर गए। बहुतों के स्वाभिमान को नई ललकार लगी और उन्होंने कौम के स्वाभिमान को बहाल करने का प्रण लिया।

सिक्ख कौम का इतिहास आज़ादी के संघर्ष का अद्वितीय इतिहास है। इस संघर्ष में उनकी पहचान का कौमी चिन्ह उनके केश उनकी आज़ादी की लालसा के प्रतीक हो गए। सिक्ख रोज़ाना की अरदास में 'केश दान' के लिए भी याचना करने लगे। ❁

गुरुद्वारा : संस्था के रूप में

*-प्रो बलविंदर सिंघ, लुधियाना**

श्री गुरु नानक देव जी के समय एवं उनसे कुछ समय बाद भी जहां 'संगत' तथा सत्य की विचार करने वाले सिक्ख गुरु के पास बैठकर तत्ववेत्ता एवं ज्ञाता बनते थे उस पवित्र स्थान को 'धरमसाल' (धर्मशाला) कहते थे। गुरु नानक पातशाह ने गुरसिक्खी की मूल बाणी 'जपु' के शिखर पर पहुंच कर 'धरमसाल' की बड़ी गहरी, गंभीर तथा स्पष्ट व्याख्या की है। इस बाणी के अनुसार धरमसाल वो है जहां सगुण एवं निर्गुण साथ-साथ चलते हैं। दुनिया के अन्य मतों वाले मतवान या तो वाहिगुरु के निर्गुण स्वरूप की प्रशंसा करते हैं तथा दुनिया त्याग देने की ताकीद करते हैं या उसके सगुण स्वरूप को आगे रखकर अंधाधुंध ऐसे भागते हैं कि उनको अपनी होश ही नहीं रहती। वे मदमस्त हो, रसों-कसों में फंसकर, स्वादों में खचित होकर, जीवन को व्यर्थ गंवा कर चले जाते हैं। गुरु नानक साहिब निर्गुण एवं सगुण स्वरूप को इकट्ठा देखते हैं तथा इकट्ठा रखते हैं। गुरमति द्वारा बताए इस संतुलन को जब जीवन में ढाल लिया जाता है तो सारी धरती ही 'धरमसाल' बन जाती है।

'धरमसाल' वो जगह है जहां निर्गुण तथा सगुण का खूबसूरत संगम होता है। रात, ऋतु, थित, वार इनका कोई स्थूल स्वरूप नहीं। इनको पकड़ा नहीं जा सकता, इनको तो केवल महसूस किया जा सकता है। यह वाहिगुरु का एक बहुत बड़ा गुण है। पवन, पानी, अग्नि व पाताल इनको हासिल भी किया जा सकता तथा इनका आनंद भी लिया जा सकता है। ये सब रचनाएं वाहिगुरु का सगुण स्वरूप हैं। इसकी समझ 'धरमसाल' अथवा 'गुरुद्वारे' से होती है। जब मनुष्य दुनिया भर के पाखंडों से हटकर, निकम्मे भ्रमों तथा कर्मों को त्याग कर, वाहिगुरु के सगुण स्वरूप का आनंद लेता हुआ, निर्गुण की आराधना कर, मन को गुरु की कृपा द्वारा साध कर 'गुरु' तथा 'गुरुद्वारे' द्वारा दी हुई जीवन-जाच को जीयेगा तो वह मनुष्य गुरसिक्ख बन जायेगा तथा उसका घर 'धरमसाल' कहलायेगा। भाई गुरदास जी के कथन के अनुसार गुरु नानक साहिब के चरणों के स्पर्श से हर घर 'धरमसाल' का रुतबा प्राप्त कर गया और उसके अंदर किरत के साथ-साथ, कर्ता की कीर्ति की धुनें भी सुनाई देने लगीं। ऐसी है 'धरमसाल', यह है कार्य 'गुरुद्वारे' का और यही संकल्प है गुरुद्वारे सम्बंधी महान गुरु, गुरु नानक साहिब का।

'गुरुद्वारा' अपने आप में महान पवित्रता समोये बैठा है। 'गुरुद्वारे' का क्या भाव है, क्या भावना है, यह विचारने तथा समझने की जरूरत है। 'गुरुद्वारे' का अर्थ है 'गुरु-घर', 'गुरु का दुआरा (द्वारा)'। इसको गुरु जी का दरवाजा या किवाड़ कह सकते हैं अर्थात् वह घर जिसमें गुरु पातशाह निवास करते हैं। श्री गुरु नानक देव जी के मुताबिक 'गुरु का द्वारा' अर्थात् 'गुरुद्वारा' वह स्थान है जहां से गुरमति की समझ आती है। हम इस दुनिया में आये हैं। हमें यह शरीर रूपी पात्र प्राप्त हुआ है। इसको इस प्रकार से तराशना है कि इस दुनिया

के मालिक व समस्त सृष्टि के सृजनहार को अच्छा लगने लग जाये। इस पात्र का भीतरी मन दौड़ता-भागता है। यह पल भर भी टिकता नहीं अर्थात् टिकने नहीं देता। इस अफरा-तफरी में यह अति मलीन हो चुका है। शरीरों को केवल धोने, श्रृंगारने एवं संवारने से ही हम वाहिगुरु को अच्छे नहीं लगेंगे, आवश्यकता है कि हमारे तथा वाहिगुरु के दरमियान झूठ की कतार टूटे और हम ऐसे बोल बोलें कि पिता-वाहिगुरु हमें स्वयं प्यार करने लग जाये। 'गुरु का द्वारा' अर्थात् 'गुरुद्वारा' वो स्थान है जहां से आदर्श जीवन-जाच की सूझ पड़ती है:

भांडा हछा सोइ जो तिसु भावसी ॥
भांडा अति मलीणु धोता हछा न होइसी ॥
गुरू दुआरै होइ सोझी पाइसी ॥
एतु दुआरै धोइ हछा होइसी ॥
मैले हछे का वीचारु आपि वरताइसी ॥
मतु को जाणै जाइ अगै पाइसी ॥ (पन्ना ७३०)

श्री गुरु नानक देव जी के इस शबद से यह दिशा मिलती है कि गुरुद्वारे से गुरु द्वारा दिया हुआ ज्ञान मिलता है ताकि मनुष्य तरह-तरह के भ्रमों में ही न पड़ा रहे। गुरु की दी गई समझ से इस जन्म को किस प्रकार संवारा जा सकता है। लिया हुआ अमोलक जन्म निष्फल न जाये क्योंकि हमने तो आगा संवारने के लिए यह जन्म पाया है। गुरमति का हुक्म है :

आगाहा कू त्राघि पिछा फेरि न मुहडड़ा ॥
नानक सिझि इवेहा वार बहुड़ि न होवी जनमड़ा ॥ (पन्ना १०९६)

अगर इस बार मिली ज़िंदगी भली-भांति संवार ली जाये तो तीनों लोकों में अपने-आप डंका बजेगा। पिछले जन्मों का चक्र छोड़कर वर्तमान में विचरन करना है, उत्साह से आगे चलना है, पीछे नहीं मुड़ना। इस प्रकार अगर यह जन्म संवार लिया जाये तो पुन: जन्म नहीं होगा।

सभी दुनियादार जीव तथा मनुष्य अपने शरीर के भरण-पोषण में लगे हुए हैं। नौ द्वार प्रकट हैं। इनकी भूख को तृप्त करने में ही ज़िंदगी व्यतीत हो जाती है। दसवें द्वार का कैसे पता चले? वो द्वार सूक्ष्म है, गुप्त है, उसका पता तो केवल गुरु से तथा गुरुद्वारे के साथ सुरति जोड़ने पर ही लगता है :

-हरि जीउ गुफा अंदरि रखि कै वाजा पवणु वजाइआ ॥
वजाइआ वाजा पउण नउ दुआरे परगटु कीए दसवा गुपतु रखाइआ ॥
गुरदुआरै लाइ भावनी इकना दसवा दुआरु दिखाइआ ॥ (पन्ना ९२२)
-नउ दरवाजे दसवा दुआरु ॥
बुझु रे गिआनी एहु बीचारु ॥
कथता बकता सुनता सोई ॥
आपु बीचारे सु गिआनी होई ॥ (पन्ना १५२)

जो इस द्वार को जान ले वही ज्ञानी है। ज्ञान का दाता गुरु है। सूझ प्रदान-कर्त्ता गुरु है। गुरुद्वारा इसी की सूझ करायेगा तथा गुरसिक्ख गुरु से ज्ञान प्राप्त करके ज्ञानी बन जायेगा, क्योंकि उसने यह पहेली जान ली है एवं गुरु-कृपा द्वारा अपने आप को पहचान लिया है।

हम इस जीवन में देखते हैं कि जब कोई मनुष्य अपने किसी मित्र के साथ ज्यादा घुल-मिल जाये, हर दम उसका ही संग चाहे तो कहते हैं, "तू तो उसके साथ ऐसे रहता है जैसे उसके साथ ब्याहा हुआ है।" भाव यह कि जिसका साथ अच्छा लगे, जिसका संग मन को भाये, उस सम्बंधी ही हम ऐसा कहते हैं। यही हाल पुरुष-औरत के विवाहित सम्बंधों के बारे में है। विवाहित दंपत्ति विवाह के उपरांत इकट्ठे एक जगह पर रहते हैं। गुरु नानक साहिब इस

सम्बंध में बड़ी खूबसूरत बात कहते हैं :

गुरू दुआरै हमरा वीआहु जि होआ जां सहु मिलिआ तां जानिआ ॥

तिहु लोका महि सबदु रविआ है आपु गइआ मनु मानिआ ॥ *(पन्ना ३५१)*

इसमें गुरदेव कहते हैं--"मैं गुरुद्वारे के साथ जुड़ गया हूं। गुरु की मति का प्रकाश हृदय में हो गया है। उसके साथ मेरा आत्मिक मिलन हो गया है। उसके साथ मैं ब्याहा गया हूं तथा गुरु-कृपा द्वारा मुझे अकाल पुरख सम्बंधी इस तरह प्रकाश हुआ है कि मेरा मन सदैव खुशी में है। ऐ दुनिया के लोगो! वह शब्द अनाहद मेरे अंदर रच गया है, जिससे मेरा अहं दूर हो गया है।" बस, समझने की बात यह है कि यदि जगत-पिता गुरु नानक साहिब का मन गुरुद्वारे के साथ ब्याहे जाने या जुड़ जाने से अनहद खुशियां प्राप्त कर सकता है तो फिर यदि हम जुड़ जायें तो हम भी सदीवी खुशियां प्राप्त कर सकते हैं, हमारा अहं खत्म हो जायेगा। सांप्रदायिकता, भेदभाव, मनमुटाव, दुश्मनियां तथा बंटने का नाश होगा; प्रभु से एक हो जायेंगे।

गुरुद्वारा : एक संस्था : 'गुरुद्वारा' ईंट, मिट्टी, चूना, सीमेंट, लोहा, लकड़ी, संगमरमर, ग्रेनाइट या अन्य कीमती नक्काशियों, कला-कृतियों से नहीं बनता। ये सब वस्तुएं तो होटलों, क्लबों, बहुमंजिली इमारतों, नाच-घरों, शराबखानों तथा मकबरों में भी लगी हुई हैं, परंतु वे ज़िंदगी नहीं दे रहे, अपितु वे तो ज़िंदगी से बहुत दूर हैं। बात तो है आत्म और परमात्म की। गुरुद्वारे की खूबसूरती तथा स्तुति आध्यात्मिक वस्तुओं के साथ है। जब ये स्रोत गुरुद्वारे में से निकल कर अतृप्त ज़िंदगी को शांति प्रदान करते हैं तो सब वस्तुएं सुंदर तथा शोभनीय लगने लग जाती हैं।

गुरुद्वारे का सबसे पहला तथा मुख्य अंग है 'संगत'। *"सतसंगति कैसी जाणीऐ ॥"* का उत्तर है : *"जिथै एको नामु वखाणीऐ ॥"* यही महान कार्य गुरुद्वारे का है। यहां पर साधसंगत एकत्र होती है। संगत की इकत्रता साध-रूप होती है। गुरु के सम्मुख एकत्र होकर सुरति लगती है तथा दुविधा दूर होती है; मन मिलते हैं, सच्चे शबद के स्वभाव का ज्ञान प्राप्त होता है। कथा-कीर्तन एवं शबद-बाणी की व्याख्या हउमै का पर्दा उतार कर प्रतापी पुरख, सतिपुरख, आनंददायक अकाल पुरख के साथ मिला देती है:

साध संगि जउ तुमहि मिलाइओ तउ सुणी तुमारी बाणी ॥

अनदु भइआ पेखत ही नानक प्रताप पुरख निरबाणी ॥ *(पन्ना ६१४)*

गुरुद्वारे का दूसरा महान अंग है 'पंगत'। पंगत में सब गुरु के प्यारे ऊंच-नीच, अमीर-गरीब, जात-पात के भेदभाव के बिना इकट्ठे बैठकर अन्न-पानी ग्रहण करते हैं। सदियों से इन भेदभावों के कारण मनुष्य जाति बंटी हुई है। इसी बांट से खंड-खंड हुई मानवता कमजोर और दुर्बल होकर भटकती है।

गुरु पातशाह ने गुरुद्वारों के साथ लंगर अथवा पंगत स्थापित कर मनुष्य की जिंदगी के सफर को आसान कर दिया, भ्रम मिटा दिया, फोकट कर्म खत्म कर दिये। दो प्रकार के लंगर का जिक्र है--'शबद लंगर' और 'लंगर दौलत'। 'रामकली की वार' में भाई सत्ता जी-भाई बलवंड जी ने इसका विस्तार से उल्लेख किया है।

तीसरा अंग--हर गुरुद्वारे के साथ एक 'निशान साहिब' लगा होता है। यह भली प्रकार परखने की जरूरत है कि निशान साहिब का भाव क्या है? प्राचीन पोथियों तथा लिखितों में 'जपु जी साहिब' की जगह पर 'जपु नीसाणु' लिखा मिलता है। इसका भाव है कि 'जपु' अब

जंगलों, गुफाओं में छुप कर नहीं किया जायेगा। 'जपु' वाले को किसका डर है? 'जपु' तो निर्भय करता है। 'नीसाणु' का शब्दी अर्थ है--धौंसा, नगाड़ा। यह निडरता तथा अभय राज्य की निशानी है। जहां पर यह लगा है वहां भय कोई नहीं, डर कोई नहीं। जो डर या भय संयम या अनुशासनता का था, वह अकाल पुरख की चाकरी से खत्म हो गया और हमारी दशा क्या बनी कि हम स्वयं अपने साहिब के अंग-संग होने के कारण उसका अंग ही बन गये। यह पद प्राप्त हुआ खसम (प्रभु) की चाकरी के कारण :

एह किनेही चाकरी जितु भउ खसम न जाइ ॥
नानक सेवकु काढीऐ जि सेती खसम समाइ ॥
(पन्ना ४७५)

गुरुद्वारा साहिब में झूलता निशान साहिब इस बात का प्रतीक है कि यहां पर निर्भयता है, अभय-दान है। यहां पर गुरु को मानने वाले पवित्र आत्माओं के मालिक इकट्ठे होते हैं। यहां पर आने वालों को बराबरी तथा एकता का वातावरण मिलेगा और सतिसंग प्राप्त होगा; शरीर को पालने के लिए एक जैसा, एक समान अटूट लंगर मिलेगा। यहां पर आने वालों का मन नीचा तथा मति ऊंची होगी। इसके साथ जुड़ने वालों की आबरू महफूज होगी। वे सम्मान पायेंगे--यहां भी और साईं के दरबार में भी।

गुरुद्वारे का चौथा मुख्य अंग है--'शफाखाना'। इस पवित्र परंपरा का विकास गुरु नानक साहिब से ही हो गया था। गुरु नानक साहिब ने कुष्ठ रोग से पीड़ित एक कुष्ठ रोगी का उपचार अपने पवित्र हाथों से करके उसको आरोग्य किया। इस महान ऐतिहासिक घटना के बाद सभी गुरु साहिबान ने गुरुद्वारों के साथ 'शफाखाना' बनाना अनिवार्य कर दिया। श्री गुरु हरिराय साहिब द्वारा कीरतपुर साहिब में कायम किया 'शफाखाना' इस परंपरा का शिखर है। उस शफाखाने में नायाब दवाइयां, जो शाही दवाखाने में भी नहीं थीं, वे भी उपलब्ध थीं तथा ये बिना किसी भेदभाव के जरूरतमंदों को दी जाती थीं। गुरुद्वारा जहां रोग-रहित बलशाली ऋष्ट-पुष्ट आत्मा तथा मन का निर्माण करता है वहीं शरीर को भी ऐसा ही रखता है। शरीर ही तो उस बलवान, पवित्र आत्मा का वाहक है। इसको ऐसे ही संवार कर रखना है, जिस प्रकार सवार अपने घोड़े को और आधुनिक मनुष्य अपनी कार या गाड़ी को रखता है।

दवाखाने तथा शफाखाने में एक विशेष अंतर है। दवाखाने में वैद्य, हकीम, डाक्टर को अपनी दवाई तथा हिकमत पर गर्व होता है। गुरमति में चतुराइयों तथा हिकमतों की कोई जगह नहीं। इंसान को लाखों हिकमतें क्यों न आती हों, इनकी जरा भी मान्यता उस परमात्मा के दर पर नहीं। दवाई शफाखाने में भी दी जाती है परंतु परवरदिगार पर भरोसा रख कर। शफाखाना चलाने वाले के मन में यह प्रबल इच्छा होती है कि रोगी ठीक हो; कर्त्ता (प्रभु) मुझे कारण बनाकर दवाई दिलवा रहा है। शफा तो उसके हाथ में है। वह अपनी लाज स्वयं पालता है तथा रोगी अच्छा-भला हो जाता है। दवाखाने वाला व्यापार करता है किंतु शफाखाने वाला प्यार। दवाखाने वाले की नज़र रोगी की जेब पर होती है, उसकी दर्द का एहसास उसको नहीं होता या बहुत ही कम होता है। शफाखाने वाले की नज़र रोगी की जेब के नीचे धड़कते दिल की अंदरूनी पीड़ा में है। वह उसका दर्द महसूस करता है। इस तरह के शफाखाने गुरू साहिबान गुरुद्वारों के साथ बनाते थे तथा हमसे भी इसी तरह चाहते हैं।

आधुनिक समय में जब मेडिकल विज्ञान तरक्की की चढ़ाइयां चढ़ कर शिखर पर पहुंच रही है तब गुरुद्वारों के प्रबंधक, सेवादार तथा कमेटियां अच्छी एवं आधुनिक डाक्टरी सेवाएं भी प्रदान करें। ऐसा करने से स्वाभाविक ही सिक्खी का प्रचार होगा तथा लोगों में श्री गुरु ग्रंथ साहिब एवं सिक्खी के लिए परिपक्व श्रद्धा उत्पन्न होगी। गुरुद्वारा साहिबान अपने वित्त के अनुसार शफाखाने कायम करें, महंगी दवाइयां बिना लाभ-हानि के आधार पर लोगों तक पहुंचाएं। हर गुरुद्वारा कमेटी मेडिकल कालेज, बड़े या छोटे अस्पताल तो खोल नहीं सकती किंतु पैथोलोजिकल लैबोरेट्रीज खोल कर, रोग की पहचान करके, सही रिपोर्ट देकर रोगियों को अनिश्चितता में से निकाल कर उनकी परेशानी तो कम कर ही सकती है।

गुरुद्वारे का पांचवां अंग है--'शिक्षा'। गुरुद्वारा साहिब के स्वरूप को इस प्रकार देखा जाये कि गुरुद्वारे की इमारत या हाल एक स्कूल या पाठशाला है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के अंदर दस गुरु साहिबान के रूप प्रकाश-दाता तथा ज्ञान-दाता अध्यात्म के रास्ते पर अध्यापक-स्वरूप हैं। सिक्ख संगत संतों की जमात है, जो गुरबाणी के पाठ रूपी शबद पढ़कर, अपना अज्ञान-अंधेरा दूर कर ज्ञानवान बनती है। तात्पर्य यह हुआ कि गुरुद्वारे का तो काम ही शिक्षा देना है। पिछले समय में गुरुद्वारे के साथ गुरमुखी सिखाने का कार्य किया जाता था। इतिहास सिखाने के लिए 'श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ' की कथा एक परंपरा ही बन चुकी थी। इसके अलावा संगीत विद्यालय कीर्तन की शिक्षा दिया करते थे। ऐसी परंपराओं को पुन: अधिकाधिक उत्साह के साथ गतिशील करना चाहिए। धर्म की हानि होती देखकर उस युग में गुरु नानक साहिब ने कहा था:

हउ भालि विकुंनी होई ॥
आधेरै राहु न कोई ॥
विचि हउमै करि दुखु रोई ॥
कहु नानक किनि बिधि गति होई ॥ (पन्ना १४५)

गति की विधि गुरु नानक साहिब खुद ही बता रहे हैं। गति संभव है, गुरु, गुरमति, गुरबाणी तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब द्वारा, जिसका द्वार है 'गुरुद्वारा'। गुरु के प्रकाश में अति आवश्यक है कि गुरुद्वारा साहिबान के साथ गुरमति विद्यालय, संगीत विद्यालय, शिक्षण संस्थायें, स्कूल, कालेज, व्यवसायिक कॉलेज आदि वित्त के अनुसार खोलकर शिक्षा के माध्यम के साथ गुरसिक्ख, विद्वान, ज्ञानवान तथा वैज्ञानिक पैदा किए जाएं ताकि गुरुद्वारा साहिबान का वह कार्य जो गुरु साहिब की पवित्र सोचनी ने निश्चित किया था, साकार हो जाये। गुरुद्वारा एक शक्तिशाली संस्था है जो जीवनदाती तथा सुखदायी है।

कोई भी शहर, बस्ती अथवा मुहल्ला या गांव 'शरीर' के समान है तथा उसमें स्थापित गुरुद्वारा उस आबादी की 'आत्मा' के समान है। जैसे आत्मा के अस्तित्व से शरीर का जीवन है बिलकुल उसी तरह गुरुद्वारे के अस्तित्व से शहर, बस्ती या गांव का जीवन है। आज हरेक सिक्ख को यह अरदास करने की जरूरत है कि हे मालिक परमात्मा, ऐसा कभी न हो कि हम गुरुद्वारे से टूट या बिछुड़ जायें। गुरुद्वारे से बिछुड़ कर उजड़ जाएंगे।

श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा स्थापित श्री हरिमंदर साहिब (श्री अमृतसर) में गुरदेव ने पहली बार श्री आदि (गुरु) ग्रंथ साहिब का प्रकाश किया। श्री हरिमंदर साहिब पवित्र ताल में कमल की तरह शोभायमान है। गुरसिक्खों ने जीवन में भी कमल की भांति निर्लेप तथा निरालम रहना है।

सिक्ख चिंतन : सर्वधर्म-समभाव की दृष्टि

*-डॉ. महीप सिंघ**

सम्पूर्ण सिक्ख चिंतन का आधार श्री गुरु ग्रंथ साहिब हैं। यह पावन ग्रंथ सर्वधर्म-समभाव का एक अद्‌भुत उदाहरण है। संसार के सभी धर्म-ग्रंथों में जो संदेश और उपदेश संगृहीत हैं उनमें मानव-मात्र के कल्याण, व्याधियों से मुक्ति और प्रभु-मिलन की कामना की गई है। सभी धर्म-ग्रंथों में उस धर्म के प्रवर्तक आदि के दैवी ज्ञान का संकलन होता है और उसके बताए प्रभु-प्राप्ति के मार्ग का अनुसरण करने का आग्रह होता है।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब का संकलन-संपादन कुछ अलग प्रकार का है। इसमें छः सिक्ख गुरु साहिबान द्वारा रचित बाणी के साथ देश भर में फैले हुए पंद्रह भक्त साहिबान की, ग्यारह भट्‌ट साहिबान की तथा गुरसिक्खों की बाणियां सम्मिलित हैं। इन बाणीकारों में सुदूर बंगाल के संस्कृत के भक्त जैदेव जी हैं; आज के उत्तर प्रदेश के भक्त कबीर जी, भक्त रविदास जी, भक्त भीखण जी, मध्य प्रदेश के भक्त सैण जी, राजस्थान के भक्त धंना जी, सिंध के भक्त सधना जी और महाराष्ट्र के भक्त नामदेव जी, भक्त परमानंद जी तथा मुलतान (पाकिस्तान) के शेख फरीद जी की बाणी भी संगृहीत है।

जिस युग में श्री गुरु ग्रंथ साहिब को लिपिबद्ध किया गया था वह युग धर्मों, वर्गों, जातियों में बंटा हुआ था। सत्ता पर मुस्लिम शासकों का अधिकार था, बहुसंख्यक हिंदू वर्ग जात-पात और ऊंच-नीच की व्यवस्था में बुरी तरह जकड़ा हुआ था। श्री गुरु नानक देव जी ने अपने जीवन में चार बड़ी यात्राएं भी की थीं। इन यात्राओं में उन्होंने हिंदू-तीर्थों की यात्राएं कीं, मुसलमानों के पीरों की दरगाहों पर भी गए, मक्का, मदीना तथा बगदाद का भ्रमण किया, सभी धर्मों और उनके नेताओं, पुरोहितों एवं काजियों से संवाद किया।

श्री गुरु नानक देव जी के जीवन भर के साथी और मित्र भाई मरदाना जी एक मिरासी मुसलमान थे। वे रबाब बहुत अच्छी बजाते थे। श्री गुरु नानक देव जी द्वारा प्रवर्तित मार्ग मानवीय एकता, सद्‌भाव, समता और संकीर्णताविहीन मार्ग था। उन्होंने अपने समय की राजनीतिक स्थिति, विदेशी आक्रमण, आम लोगों पर होने वाले अत्याचारों और सामाजिक विद्रूपताओं पर तीखी टिप्पणियां कीं; उस समय के राजाओं, शासकों, सरकारी कर्मचारियों, न्यायाधीशों के चरित्र को उजागर किया। अपनी बाणी में एक स्थान पर उन्होंने कहा है- "आज के शासक व्याघ्र के समान हो गए हैं। उनके कर्मचारी कुत्तों के समान हो गए हैं। वे आम लोगों को अपने तेज नाखूनों से घायल करते रहते हैं और उनके रिसते हुए खून को चाट जाते हैं। जब परमात्मा के सामने उन्हें लाया जाएगा तो इनकी नाक काट ली जाएगी।"

राजे सीह मुकदम कुते ॥
जाइ जगाइन्हि बैठे सुते ॥
चाकर नहदा पाइन्हि घाउ ॥
रतु पितु कुतिहो चटि जाहु ॥
जिथै जीआं होसी सार ॥

**एच-१०८, शिवाजी पार्क, नई दिल्ली-११००२६, मो : ९३१३९३२८८८*

नंकी वढी लाइतबार ॥ *(पन्ना १२८८)*

उस समय न्याय-व्यवस्था कितनी भ्रष्ट हो गई थी, श्री गुरु नानक देव जी ने इस विषय पर भी प्रकाश डाला है। काजी न्यायाधीश बनकर न्याय करने का दावा करता है। वह हाथ में न्याय की माला फेरते हुए ईश्वर का नाम लेता रहता है, किंतु व्यवहार में रिश्वत लेकर न्याय करते हुए अपने कर्त्तव्य को भूल जाता है। यदि कोई उसके ऐसे न्याय पर प्रश्न उठाता है तो वह न्याय संहिता की दुहाई देने लगता है :

काजी होइ कै बहै निआइ ॥
फेरे तसबी करे खुदाइ ॥
वढी लै कै हकु गवाए ॥
जे को पुछै ता पड़ि सुणाए ॥ *(पन्ना ९५१)*

रिश्वत लेकर झूठी गवाही देने वालों की भी कमी नहीं है। ऐसे लोग तो फांसी दिए जाने योग्य हैं :

लै कै वढी देनि उगाही दुरमति का गलि फाहा है ॥ *(पन्ना १०३२)*

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में ऐसे अनेक संकेत हैं कि राजा कैसा होना चाहिए, बादशाह में क्या गुण होने चाहिए, उसका अपनी प्रजा के प्रति रवैया कैसा होना चाहिए, उसी व्यक्ति को शासक बनना चाहिए जो उसके योग्य हो :

तखति राजा सो बहै जि तखतै लाइक होई ॥
जिनी सचु पछाणिआ सचु राजे सेई ॥
(पन्ना १०८८)

गुरबाणी में शासक, शासन-तंत्र, न्याय-पद्धति, राजनीतिक भ्रष्टाचार, आर्थिक घोटालों जैसे सामाजिक सरोकारों पर तीखी टिप्पणियां हैं और इनसे उभरने के सूत्रों की गहरी चर्चा है। राजनीति में नैतिकता होना और राजनीतिज्ञों द्वारा साधारण जनता की सेवा करने के पक्ष पर बार-बार आग्रह किया गया है। सम्पूर्ण सिक्ख परंपरा सभी धर्मों का आदर करती है और आचरण की शुद्धता पर बल देती है। शासक कोई भी हो, उसका धर्म कोई भी हो, उसकी सार्थकता उसकी पारदर्शिता में है।

यह भी इतिहास की विडंबना ही है कि पांच सौ वर्ष पूर्व जिस शांति-पथ का प्रवर्तन हुआ था और जिसने असमानता, अन्याय और पाखंड के विरुद्ध सामाजिक-क्रांति का उद्घोष किया था, उसका तत्कालीन सरकार से टकराव उत्पन्न हो गया। श्री गुरु नानक देव जी से लगभग एक सौ वर्ष बाद पांचवें गुरु श्री गुरु अरजन देव जी को तत्कालीन मुगल शासक जहांगीर ने बंदी बनाकर, अनेक यातनाएं देकर शहीद कर दिया। जहांगीर ने अपनी आत्म-कथा 'तुजक-ए-जहांगीरी' में श्री गुरु अरजन देव जी पर अनेक निराधार आरोप लगाते हुए यह भी लिखा है कि "असंख्य लोग उनके अनुयायी थे, जिनमें बहुत-से मुसलमान भी थे।" श्री गुरु अरजन देव जी के बाद गुरु के शिष्यों और मुगल शासकों में टकराव कई सदियों तक बना रहा। दशम गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के समय से यह टकराव सशस्त्र हो गया। यह दृष्टव्य है कि टकराव सदैव सिक्खों और शासकों के मध्य रहा। सिक्खों और मुसलमान जनता के बीच सद्भाव सदैव बना रहा। सिक्खों ने कभी धार्मिक विश्वासों और आस्थाओं को राजनीति पर हावी नहीं होने दिया।

अठारहवीं शती के अंतिम वर्षों से उन्नीसवीं शती के मध्य तक पंजाब, सीमाप्रांत और कश्मीर पर सिक्खों की राजनीतिक सत्ता का वर्चस्व छा गया था। उस समय महाराजा रणजीत सिंघ की राजनीतिक प्रभुता की दुंदुभी गूंज रही थी। महाराजा रणजीत सिंघ ने कभी सर्वधर्म-समभाव और धर्म-निर्पेक्षता के आदर्श को खंडित नहीं होने दिया। महाराजा रणजीत

सिंघ के शासन-तंत्र में जम्मू का डोगरा राजपूत धिआन सिंघ प्रधानमंत्री था। लाहौर के सम्मानित फकीर खानदान के तीन भाई--अजीजुद्दीन, नूरुद्दीन और इमामुद्दीन में से एक विदेश मंत्री था, एक गृह मंत्री था और एक शाही खजाने का प्रबंधक था। वित्त मंत्रालय का सारा काम काजी दीवान दीनानाथ, अयोध्या प्रसाद, भवानी प्रसाद संभालते थे। दीवान मोहकम चंद एक वणिक परिवार से था, जो महाराजा रणजीत सिंघ की प्रारंभिक विजयों का सेनानायक था। आगे चलकर सरदार हरी सिंघ नलूआ ने सेना की कमान संभाली थी और अपने पराक्रम से अफगानिस्तान तक अपने नाम की दहशत फैला दी थी।

महाराजा रणजीत सिंघ का शासन-काल सही अर्थों में श्री गुरु ग्रंथ साहिब के आदर्शों के अनुसार सर्वधर्म-समभाव का उदाहरण था। इसे यूं भी कहा जा सकता है कि विभिन्न धर्मों के सह-अस्तित्व की भावना को यह धर्म-ग्रंथ न केवल पुष्ट करता है बल्कि बल भी देता है।

गत् शताब्दी में धर्म और राजनीति का तालमेल इतना बढ़ा कि वह इस देश के विभाजन में प्रतिफलित हुआ। परिणाम हमारे सामने है। सिक्ख धर्म में धर्म और राजनीति का सुमेल गुरु नानक साहिब के समय से ही रहा है। इस सुमेल को संतुलित अवस्था में बनाए रखते हुए हमें राजनीति का प्रयोग धर्म की सलामती के लिए तथा धर्म का प्रयोग आदर्श राजनीति करने के लिए करते रहना चाहिए।

गुरु घर के समर्पित सेवक : बाबा बुड्ढा जी

(पृष्ठ २७ का शेष)

जब जहांगीर ने छठम् पातशाह को ग्वालियर के किले में नज़रबंद कर दिया तब भी बाबा बुड्ढा जी ने गुरु साहिब की रिहाई में विशेष भूमिका निभाई। पंजाब से सिक्ख-संगत बाबा बुड्ढा जी एवं भाई गुरदास के नेतृत्व में जत्थे बनाकर ग्वालियर पहुंचते, किले की दीवारों को चूमते, परिक्रमा करते और लौट जाते। सिक्खों के इस शांति-प्रिय आंदोलन को देखकर जहांगीर बहुत प्रभावित हुआ और अंततः गुरु जी को मुक्त करने के लिए मज़बूर हो गया।

१६१२ ई में गुरु जी की रिहाई के बाद बाबा बुड्ढा जी बीड़ साहिब चले गये। छठम् पातशाह जब भी बीड़ साहिब आते आप को दर्शन अवश्य देते।

सप्तम एवं नवम् पातशाह के दर्शन : नवम् पातशाह का जन्म १६२१ ई एवं सप्तम पातशाह का जन्म सन् १६३० ई में हुआ। निश्चित रूप से बाबा बुड्ढा जी को नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर जी एवं सप्तम पातशाह श्री गुरु हरिराय जी दो भावी गुरु साहिबान के दर्शन करने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ होगा।

अकाल चलाना : गुरु-घर के अत्यंत निकटवर्ती एवं अनन्य सेवक बाबा बुड्ढा जी सन् १६३१ ई में १२५ वर्ष की आयु भोगकर अकाल चलाना कर गये। छठम् पातशाह ने बाबा जी को अंतिम समय में स्वयं दर्शन दिए और उनका अंतिम संस्कार स्वयं अपने हाथों से किया।

मानसिक स्वास्थ्य

*-सुरेंद्र कुमार अग्रवाल**

आज के भौतिक युग में व्यक्ति तो अपने तक ही सीमित बन चुका है, वह अकेले ही सारे सुख-साधनों को बटोरने में लगा रहता है। जब दौड़कर थक जाता है तो निराश हो जाता है। व्यक्ति जब मानसिक रूप से अस्वस्थ होता है तो उसके अंदर गंभीरता, एकाग्रता व सहृदयता के भाव समाप्त हो जाते हैं। वह हताश होकर बात-बात में क्रोधित हो उठता है। निराश व्यक्ति अपने मन के अनुरूप परिस्थितियां न होने पर विचलित होता है। फिर उसे मानव जीवन परमात्मा का उपहार/वरदान नहीं, एक अभिशाप/भार प्रतीत होने लगता है। वह कभी-कभी विचलित होकर आत्मघात करने के बारे में सोचने लगता है। इसका मुख्य कारण है मानसिक रूप से स्वस्थ्य न होना।

अगर हम प्रसन्न रहना चाहते हैं तो अपने को हर सुख-दुख की स्थिति में संतुलित रखें हम मानसिक रूप से स्वस्थ्य बनें, मानसिक स्वास्थ्य व्यक्ति की पहली आवश्यकता है। हमारा शरीर पंच तत्वों से बना है, जिसमें मन प्रमुख है। मन चेतन व शरीर जड़ है। मानसिक स्वास्थ्य पर ही शारीरिक स्वास्थ्य निर्भर है।

मन को शुद्ध बनाएं : जिसका मन शुद्ध होता है उसके शरीर में रोग नहीं होते और अगर कभी रोग हो भी जाए तो स्वस्थ्य मन के सहारे व्यक्ति जल्दी ठीक हो जाता है। जिसका मन शुद्ध होता है उसका शरीर भले कमज़ोर हो लेकिन वह बढ़-चढ़कर कार्य करता है। सिक्ख-धर्म के गुरु साहिबान का शरीर मज़बूत होने के साथ-साथ मन पवित्र एवं सेवाभावी था, अत: वे परहित में तन, मन और धन अर्पण करने में पीछे नहीं रहे। चाहे नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब हो या बाबा बंदा सिंघ बहादर जिनके अंग-अंग काटकर शहीद किया गया, मन मज़बूत स्वास्थ्य व सेवाभावी था। अत: वे किसी भी कीमत पर झुके नहीं। अपने कर्त्तव्य धर्म से ढिगे नहीं। सदैव अपने धर्म पर दृढ़ एवं अडोल रहे।

मन को स्वस्थ्य व संतुलित बनाएं : मन विचारों की उत्पत्ति का स्थान है। सभी अच्छे-बुरे विचारों का प्रभाव हमारे शरीर पर पड़ता हैं। जब तक मन संतुलित व स्वस्थ्य रहता है, व्यक्ति अच्छे कार्य करता है। कितनी भी विपरीत स्थितियां आए, व्यक्ति बीमार नहीं होता। कितनी भी असफलता मिले वो निराश नहीं होता। जिसका मन स्वस्थ्य सुंदर होता है वह हर स्थिति में हिमालय की भांति अडिग खड़ा रहता है। चैतन्य मन का प्रभाव व्यक्तित्व पर पड़ता है। यदि मनुष्य का मन पवित्र और सेवाभावी है तो वह कष्ट सहन कर भी सेवा कार्यों में लगा रहता है। इसके विपरीत स्वार्थी मन अपने तक सीमित होता है। वह धन, साधन और प्रतिभा पाकर भी कोई सेवाकार्य नहीं कर पाता। स्वार्थी व्यक्ति हर जगह देखता है। अगर अमूल्य सेवा का कार्य करेंगे तो हमें क्या मिलेगा? व्यवसायिक बुद्धि व्यक्ति को नि:स्वार्थ

**अग्रवाल न्यूज़ एजेंसी, हटा दमोह (म प्र)-४७०७७५*

Final

से कुछ भी नहीं करने देती।

मन को सेवाभावी बनाएं : सभी कार्यों में मन की भूमिका सर्वोपरि होती है। मन के मुताबिक ही लोग अच्छे-बुरे कार्य करते हैं। पवित्र सेवाभाव और उच्च विचारों से मन पर विजय प्राप्त की जा सकती है। मन को सेवाभाव में लगाकर भटकने से बचायें।

स्व-संकेतों द्वारा मन की चिकित्सा करें : अगर हमें लगता है हम मानसिक रूप से अस्वस्थ्य हैं तो मानसिक परीक्षण करायें। हम मानसिक रूप से स्वस्थ्य बनने हेतु प्रयास करें। जिस प्रकार रोगी दवा खाकर स्वस्थ्य हो जाता है उसी प्रकार मानसिक रोगी मानसिक खुराक (दवा) खाकर स्वस्थ्य बनता है। हम स्व-संकेतों द्वारा प्रतिदिन चिंतन करें- मैं पूर्ण स्वस्थ्य हूं। मेरे मन में किसी के प्रति ईर्ष्या-द्वेष नहीं है, किसी के प्रति बदला लेने की भावना नहीं है। मैं दूसरों की प्रगति देखकर/प्रशंसा सुनकर विचलित नहीं होता हूं। मेरे मन में सबके प्रति दया का भाव है, सब प्रगति करें, आगे बढ़ें इसी में मुझे खुशी होगी। इस तरह के सकारात्मक विचारों एवं भावनाओं द्वारा बीमार मन को स्वस्थ्य व सुंदर बनाया जा सकता है। श्रेष्ठ सकारात्मक उदार भावनाओं से मन की चंचलता व कठोरता कम होती है।

सकारात्मक सोचें : मन एवं शरीर के विकारों को शांत करने के लिए हमें सकारात्मक स्व-संकेतों द्वारा सेवाभावी व उदार बनने का मनन चिंतन करना चाहिए। अच्छे संकेतों द्वारा बीमार मन एवं तन को ठीक किया जा सकता हैं। संसार के सभी महापुरुषों ने जो लघु से महान बने हैं उनके विकास के पीछे उनके मन की सरलता, उदारता व सेवा-भावना प्रधान रही है। मन को पवित्र करके ही मनोविकारों पर विजय प्राप्त की जा सकती है। आज हमारे सामने सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक, राष्ट्रीय व वैश्विक समस्याएं हैं, उन सबका प्रधान कारण है जो उन्हें हल कर रहे हैं उनका मन पवित्र व उदार नहीं है। अत: हर कार्य के पीछे राज छिपा होता है। सर्वत्त देश व दुनिया में भ्रष्टाचार, अन्याय, अव्यवस्था है, अगर सभी जिम्मेदार लोग अपने मन को पवित्र उदार व सेवाभावी बनाकर कार्य करें तो राष्ट्र व विश्व को उन्नति (प्रगति) के शिखर पर ले जाने में देर न लगेगी। आओ! हम समाज की सेवा करने से पहले हम अपने मन को पवित्र उदार व सेवाभावी बनाने का प्रयास करें। ताकि हमें सर्व सुख, शांति व आनंद की अनुभूति हो। हम स्वार्थ संकीर्णता छोड़कर सबके कल्याण के लिए दिन-रात सेवा कार्य करें ताकि दुनिया के सभी लोग सुखी व प्रगतिशील बन सकें।

प्रचारक जीवन : एक दृष्टिकोण

*-डॉ परमवीर सिंघ**

प्रचारक को मिशनरी भी कहा जाता है। मिशनरी शब्द उस व्यक्ति के लिए इस्तेमाल किया जाता है जो किसी खास मिशन के अधीन समाज में कार्य करता है। धर्म के प्रचारकों के लिए साधारणतया इस शब्द का इस्तेमाल किया जाता है। ईसाई धर्म के प्रचारकों के लिए मिशनरी शब्द श्रेष्ठ हो गया है। अब अन्य धर्मों के प्रचारक भी अपने आप को मिशनरी कहते हैं। सिक्ख धर्म के प्रचारक शिक्षण केंद्रों को मिशनरी कॉलेज के नाम से जाना जाता है। जो विद्यार्थी यहां से शिक्षा ग्रहण करके लोगों में प्रचार करता है, उसे मिशनरी अथवा प्रचारक कहा जाता है।

मिशनरी एक विशेष मिशन को अपने साथ लेकर चलता है और किसी भी मुश्किल के समय वह अपने मिशन से दूर नहीं जाता, इस कार्य के लिए चाहे उसे अपनी जान ही क्यों न कुर्बान करनी पड़ जाए। श्री गुरु नानक देव जी परमात्मा के संदेश को आम एवं खास लोगों तक लेकर गए थे। आम एवं खास लोगों को उन्होंने सच का मार्ग धारण करने एवं उस पर पहरा देने का संदेश दिया था। उनके उत्तराधिकारियों ने उनके मिशन को आगे चलाया था और उसे दृढ़तापूर्वक कायम रखने के लिए उन्होंने शहादतें भी दी थीं। गुरु साहिबान के संदेश को दृढ़ कराना वर्तमान समय की मुख्य आवश्यकता है।

प्रचारक के सामने बहुत-सी मुश्किलें होती हैं। लोग हर समय उसके व्यक्तिगत एवं पंथक जीवन की परख करते हैं। जहां कहीं भी वे उसे अपने मिशन से भटकता हुआ देखते हैं तो तुरंत टिप्पणी करने से गुरेज़ नहीं करते। सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक दबाव हर समय उनके जीवन पर बना रहता है। ऐसे दबाव के कारण कई बार प्रचारक अपने मिशन से डगमगा भी जाता है, जिसका समाज पर दूरगामी प्रभाव पड़ता है।

प्रचारक कौन हो सकता है? परिवार, समाज, देश तथा कौम का हर व्यक्ति प्रचारक हो सकता है। परिवार में सामाजिक, धार्मिक तथा नैतिक जीवन-मूल्यों के प्रति बच्चों को अवगत कराना और उन पर चलने के लिए हर समय उनका नेतृत्व करना माता-पिता का प्रारंभिक दायित्व है। सांसारिक रूप से सुचारू कारोबार चलाने के लिए सांसारिक विद्या की आवश्यकता हर समय हर किसी को होती है। इस विद्या के साथ-साथ सच्चाई एवं सदाचार भरपूर विद्या की आवश्यकता भी बच्चे के जीवन में होना ज़रूरी है जो कि धर्म-ग्रंथ की शिक्षा में से प्रफुल्लित होती है। यदि माता-पिता बच्चे को योग्य सांसारिक विद्या देने या दिलाने के लिए वचनबद्ध हैं तो उसे सदाचारक विद्या प्रदान कराना भी उनकी जिम्मेदारी है। यही विधान देश-कौम को आगे ले जाने वालों पर भी लागू होता है।

प्रचारक की आवश्यकता : प्रत्येक धर्म किसी

सिक्ख विश्व कोश विभाग, पंजाबी यूनीवर्सिटी, पटियाला-१४७००२, फोन : +९१९८७२०-७४३२२

Final

एक गति में हमेशा चलता हुआ नहीं रह सकता। उसमें निरंतर उतराव-चढ़ाव आते रहते हैं। समाज में धर्म के जो जीवन-मूल्य आलोप होते दिखाई देते हैं, पैगंबर उनके प्रति चेतना पैदा करता है। पैगंबर को प्राप्त हुआ दैवी संदेश नए धर्म की बुनियाद रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। पैगंबर के पैरोकार उसके द्वारा प्रदान की गई शिक्षाओं को आगे लेकर जाने का कार्य करते हैं। समय आने पर पैरोकारों पर समाज की नकारात्मक धूल जमना शुरू हो जाती है और पैगंबर द्वारा प्रदान किए सेवा तथा परोपकार के संदेश धुंधले पड़ने लगते हैं। पैगंबर के पैरोकारों में से ही कुछ ऐसे लोग सामने आते हैं जो धर्म के जीवन-मूल्यों को आगे ले जाने के लिए प्रयत्नशील हो जाते हैं। पैगंबर की शिक्षाओं का पुनरुत्थान उनके जीवन का मिशन बन जाता है, जिसमें से प्रचारक श्रेणी सामने आती है।

हर धर्म के सूझवान व्यक्ति अपने धर्म के विभिन्न पक्षों का विश्लेषण करते रहते हैं। समाज में पैदा हो रही गिरावट के प्रति वे प्राय: चिंता प्रकट करते हैं और समाज के जीवन-मूल्यों के पुनरुत्थान के प्रति हमेशा प्रयत्नशील रहते हैं। निष्पक्ष होकर जब वे सामाजिक जीवन-मूल्यों के प्रयत्न का विश्लेषण करते हैं तो दिखाई दे रहे कारणों को आंखों से ओझल करने की बजाय वे उनको दुरुस्त करने की योजनाएं बनाते और कार्य करते हैं। विश्लेषक यह मानते हैं कि धर्म पर समाज की कार्य-शैली का प्रभाव पड़ता है, जिसमें से पैदा होती स्वार्थी वृत्ति तथा आधुनिकता की चकाचौंध, जो धार्मिक मूल्यों को प्रभावित करती है। समाज को धार्मिक जीवन-मूल्यों के मार्ग की तरफ लाने के लिए विशेष प्रयत्नों की आवश्यकता पड़ती है जिसमें से प्रचारक श्रेणी जन्म लेती है।

समाज में विद्यमान हर धर्म का व्यक्ति इस बात के प्रति चिंतित है कि उसकी कौम के अगुआ कुछ नहीं कर रहे। उनका यह गिला जायज़ हो सकता है मगर *"आपनड़े गिरीवान महि सिरु नीवां करि देखु ॥"* वाले शेख़ फरीद जी के संदेश से भी इन्कारी नहीं हुआ जा सकता। इसका यह मतलब लेना भी योग्य नहीं कि सारी जिम्मेदारी माता-पिता पर डालकर कौमी अगुआ मुक्त हो सकते हैं। धार्मिक और सदाचारक विद्या कैसी हो, समय एवं स्थान की समस्याओं के सम्मुख कौन-सी शिक्षा अधिक योग्य और कारगर साबित हो सकती है, इसका निर्णय कौमी अगुओं ने करना होता है। माता-पिता ने तो उनके संदेश का पालन करते हुए उसे बच्चों को मन में दृढ़ कराना होता है। बच्चों ने संदेश को दृढ़ करने की प्रेरणा धार्मिक संस्थाओं तथा धार्मिक अगुओं से भी ग्रहण करनी होती है, इसलिए संस्था का प्रमुख कार्य पैगंबर की शिक्षाओं के अनुकूल और उनके प्रति जनचेतना पैदा करना होता है। जिन कौमों की संस्थाएं या कौमी अगुआ अपने इस कार्य में असफल हो जाते हैं, उन कौमों की रूप-रेखा ही बदल जाती है। अपनी कौम को समय के अनुसारी बनाने के लिए हर धर्म के योग्य अगुआ तथा पैरोकार पुरज़ोर प्रयत्न करते हैं। इन प्रयत्नों के परिणामस्वरूप जो प्रचारक सामने आते हैं, वे इस प्रकार हैं :-

१. जो परमात्मा द्वारा दिए संदेश को लोगों तक ले जाने को अपना मिशन बना लेते हैं।

२. कुछ प्रचारक श्रद्धालुओं में से सामने आते हैं। वे सांसारिक रूप से चाहे किसी भी तरह के कारोबार में व्यस्त हों, मगर अपने धर्म-ग्रंथ की शिक्षा के अनुसार लोगों को धर्म की भावना

के साथ जोड़ने का पुरज़ोर प्रयत्न करते हैं।
३. जो किसी धार्मिक संस्था द्वारा नियुक्त किए जाते हैं, उनका रोज़गार धर्म के प्रचार के साथ जुड़ा होता है। इन प्रचारकों में भी कुछ ऐसे दृढ़ विश्वासी होते हैं जो रोज़गारमुखी कार्य को आंखों से ओझल करके केवल धर्म की भावना को लोगों तक पहुंचाने के लिए निरंतर प्रयत्न करते रहते हैं।

सभी प्रचारकों की अपनी-अपनी जिम्मेदारियां और सीमाएं होती हैं। जो लोग किसी संस्था द्वारा नियुक्त किए जाते हैं, उनसे लोगों को आशाएं भी अधिक होती हैं। प्रचारक का मुख्य कार्य लोगों के मन में पैगंबर द्वारा दर्शायी धार्मिक शिक्षा दृढ़ कराना होता है। इसे 'Back To Religion Values' का नाम दिया जा सकता है। प्रचारक के रूप में कार्य कर रहे प्रचारकों के बारे में जानकारी प्राप्त करने का यहां प्रयत्न किया जा रहा है।

प्रचारक के ध्यान देने योग्य बातें :

१. किसी धर्म के प्रचारक के सामने दो प्रमुख कार्य होते हैं। एक तो उसने अपने विश्वास एवं प्रचार वाले धर्म के पैरोकारों के घेरे को कमज़ोर होने से बचाना है। दूसरा, उसने इस घेरे को और अधिक खुला करने के लिए प्रयत्न करने हैं। ऐसा करते समय पहले बने धर्म के पैरोकारों के मन में धार्मिक विश्वास की गांठ को मज़बूत करना होता है।

२. अनुशासन उन्नतिशील जीवन का एक आवश्यक अंग है। मनुष्य ने जीवन में जो भी कार्य करने हैं, यदि उनका पालन एक विधिवत् ढंग से किया जाता है तो वह समाज के समूह लोगों पर प्रभाव डालता है। इसी लिए समूह कार्यालयों, शिक्षण, संस्थाओं, धार्मिक संस्थाओं आदि का कोई न कोई ऐसा विधान अवश्य होता है जो वहां काम करने वालों को मानना आवश्यक होता है। हर देश के नियम वहां की न्याय एवं सिविल प्रणाली के द्वारा लागू किए जाते हैं। जिन संस्थाओं या जत्थेबंदियों में अनुशासन का पालन होता हो, वे लंबे समय तक चलती हैं। धार्मिक कार्य करने वाले प्रचारकों एवं संगठनों का अनुशासन उनके पैगंबर की जीवन-युक्ति द्वारा निर्धारित होता है। जो व्यक्ति अनुशासन धारण किए बिना धर्म के नियमों का उपदेश देने लगते हैं, उनका जनसाधारण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यदि धर्म के प्रचारक के जीवन में से उसके पैगंबर की शिक्षा वाला अनुशासन प्रकट होता है तो वह पैरोकारों पर विशेष प्रभाव डालता है। इसलिए प्रचारक को अपने जीवन में पैगंबर की शिक्षा वाला अनुशासन धारण करना चाहिए। यहां यह भी बात ध्यान देने योग्य है कि यदि मिशनरी या प्रचारक से धर्म की शिक्षा ग्रहण करने के मामले में आम लोगों को अपने से अधिक भरोसा होता है तो ऐसी दशा में यदि वह अपने धर्म के रीति-रिवाज़ों से डगमगा जाए तो उसका नकारात्मक प्रभाव भी बड़ी तीव्रता से पड़ता है।

३. प्रचारक के कार्य-क्षेत्र में समाज का प्रत्येक वर्ग शामिल होता है। अध्यापक, व्यापारी, दुकानदार, श्रमिक, मज़दूर, समाज-सेवी संस्थाओं आदि से सम्बंधित प्रत्येक व्यक्ति उससे प्रभावित होता है। प्रचारक का मिशन तभी प्रभावशाली ढंग से लोक-मन पर प्रभाव डाल सकता है यदि उसकी भाषा सरल और लोक-मानसिकता के निकट, पहनावा जनसाधारण की तर्जमानी करने वाला तथा भोजन स्थानीय लोगों की पसंद वाला हो।

४. जब एक प्रचारक दूसरे धर्म के प्रभावाधीन क्षेत्रों में प्रचार करने जाता है तो उसके लिए

यह आवश्यक है कि दूसरे धर्म के लोगों की भावनाओं को ठेस न पहुंचाते हुए अपनी बात लोगों को बताए। यह तभी संभव हो सकता है अगर प्रचारक को दूसरे धर्मों के विश्वास, सदाचारक जीवन एवं परंपराओं का ज्ञान हो।

५. किसी समय प्रचारक के प्रभावाधीन लोग धर्म-परिवर्तन कर लेते थे। प्रचारक इस काम को अपनी बहुत बड़ी प्राप्ति मानते थे। जिस धर्म के प्रचारक को राज्य-सत्ता का सहयोग एवं समर्थन प्राप्त होता था वे खुले ढंग-तरीकों से लोगों को धर्म-परिवर्तन के लिए प्रेरित करते थे और जहां ज़रूरत पड़ती थी राज्य-सत्ता की शक्ति का इस्तेमाल भी कर लेते थे। भारत में ईसाई तथा मुस्लिम धर्म-प्रचारकों ने अपने-अपने समय में इसी विधि का इस्तेमाल किया था। अधिकतर देशों में अब लोकतंत्र कायम हो गया है। समूह धर्मों के जीवन-मूल्यों का ख़्याल रखना संविधान का हिस्सा है। धर्म परिवर्तन का पुराना ढंग लोगों ने नकार दिया है और जबरदस्ती धर्म-परिवर्तन कराने वालों के लिए सज़ा का विधान कायम हो गया है। ऐसा नहीं कि प्रचारकों के पास अब कोई काम नहीं है। जो काम पहले स्पष्ट तरीके से होता था उसके लिए अब सूक्ष्म ढंगों का इस्तेमाल किया जा रहा है। प्रचारक भी आधुनिक ढंग-तरीकों का इस्तेमाल करने लगे हैं। मोबाइल, कंप्यूटर, इंटरनेट, सोशल मीडिया आदि संचार एवं सूचना-साधनों के इस्तेमाल के साथ-साथ लोकपक्षीय कामों की तरफ विशेष ध्यान दिया जा रहा है, ताकि सूक्ष्म ढंग से इस काम को जारी रखा जा सके। जो कौमें आधुनिक संचार-साधनों के इस्तेमाल में पीछे रह जाएंगी, वे अपने अस्तित्व एवं स्वाभिमान को कायम नहीं रख सकती। प्रचारकों के लिए आधुनिक संचार-साधनों का इस्तेमाल समय की मुख्य आवश्यकता बन गया है।

६. समय तथा स्थान का हर व्यक्ति के जीवन पर प्रभाव पड़ता है। स्थानीय घटनाएं उसके जीवन पर विशेष प्रभाव डालती हैं। जो बात उसे समय तथा स्थान की घटनाओं के साथ जोड़कर बताई जाए, वह समझने में आसान लगती है और अधिक प्रभावशाली साबित होती है। प्रचारक अपने मिशन में तभी कामयाब हो सकता है अगर वह लोगों की स्थानीय भावनाओं, स्थानीय घटनाओं, स्थानीय कथा-कहानियों, रूढ़ियों, रीति-रिवाज़ों एवं परंपराओं की विस्तृत जानकारी रखता हो।

७. लोगों से दूरी बनाए रखने वाले अपनी बात लोगों तक ले जाने में अधिक सफल नहीं होते, इसलिए प्रचारकों का स्वभाव उदार एवं लोगों के साथ घुल-मिल जाने वाला होना चाहिए। ऐसा करते समय धार्मिक जीवन-मूल्यों को आंखों से ओझल नहीं करना चाहिए।

८. प्रचारक का कोई भी बोल अहं-भाव वाला और अपने आप को दूसरों पर स्थापित करने वाला नहीं होना चाहिए। धर्म का प्रचार दलील की बजाय जीवन में से हो तो अधिक प्रभाव डालता है। कोई भी बात करते समय उसको सामने बैठे श्रोता की बुद्धि एवं समझ को हीन भावना से नहीं देखना चाहिए।

९. विश्वास एवं नम्रता को धर्म की जड़ माना गया है। इसका तात्पर्य है कि जो बात नम्र-भाव से समझी या समझायी जाए वही मन पर अधिक सार्थक प्रभाव डालती है। नम्रता में से ही सेवा और परोपकार की भावना पैदा होती है, जो दूसरों का मन बदलने और धर्म के जीवन-मूल्यों के प्रति लोगों को उत्साहित करती है।

१०. प्रचारक को खरगोश की बजाए कछुए की चाल चलने की अधिक आवश्यकता है। ऐसा

करने से किसी भी समस्या को अच्छी तरह से समझने एवं सुलझाने के लिए योग्य समय मिल जाता है।

११. प्रचारक को अपने मिशन के प्रचार के लिए हमेशा प्रयत्नशील रहना पड़ता है। ज्यादातर लोगों का सम्बंध भूत एवं भविष्यमुखी मामलों की बजाए वर्तमान समय की समस्याओं के साथ अधिक होता है। जो धर्म या समाज उनको आवश्यकताओं की पूर्ति करता दिखाई देता है। वे उसी के प्रति झुकाव रखने लग जाते हैं। प्रचारक की जिम्मेदारी है कि वह वर्तमान समय की समस्याओं के प्रति संवेदनशील रहे और जब कोई गंभीर समस्या सामने दिखाई दे रही हो तो वो समय रहते उसका चिंतन करके उससे निजात पाने के लिए प्रयत्नशील हो जाए। जो समय के अनुसार नहीं चलते, लोगों की जीवन-जाच से आलोप होने लगते हैं। प्रचारक अपने धार्मिक समाज की समस्याओं के प्रति जागरूक होकर धर्म को कमज़ोर होने से बचा सकता है।

१२. प्रचारक को अपने मिशन की पूर्ति के लिए हमेशा तैयार-बर-तैयार रहना चाहिए। समय तथा स्थान की मुश्किलें, परेशानियां एवं घर से दूरी कई बार जीवन में नकारात्मक प्रभाव डालती है। इससे बचने की ज़रूरत है।

१३. प्रचारक अपने मिशन की पूर्ति तभी कर सकता है अगर वह लोगों की छोटी-बड़ी आवश्यकताओं के साथ जुड़ा रहे। स्वास्थ्य, शिक्षा, त्योहार, रीति-रिवाज़, दुख-सुख, जन्म-मरण आदि के अवसर पर जो व्यक्ति लोगों के निकट होता है, उसका प्रभाव अधिक होता है। प्रचारक का जीवन लोगों के जितना निकट होगा उतना ही वह अपनी बात समझने में सफल सिद्ध होगा।

१४. प्रचारक के लिए ज़रूरी है कि वह अपने लिए भी कुछ समय आरक्षित रखे जिससे मन में स्थिरता पैदा हो और वह अपने मिशन की पूर्ति के लिए सुचारू रूप से कार्य करने की सामर्थ्य पैदा कर सके।

प्रचार के जीवन में ठहराव :

१. प्रचारक अपने मिशन की सफलता के लिए पुरज़ोर प्रयत्न करता है। ऐसा करते समय कई बार उसके जीवन तथा प्रचार में ठहराव आने लगता है। ऐसा क्यों होता है? ऐसी स्थिति में से बाहर कैसे निकला जा सकता है? हर धर्म के प्रचारक को इस प्रश्न का सामना कभी न कभी अपने जीवन में अवश्य करना पड़ता है। इस समस्या का बड़ा कारण यह है कि उसके प्रचार से बड़ी संख्या में लोग प्रभावित नहीं होते। धर्म के पैरोकारों को प्रचारक का मिशन या प्रचार समय के साथ चलने वाला प्रतीत नहीं होता और नई पीढ़ी को उसमें से आनंद की प्राप्ति नहीं होती ।

२. प्रचारक को समाज में दूसरे धर्म के लोगों के साथ विचरना पड़ता है। जब कोई प्रचारक अपने धर्म को स्थापित करने के लिए दूसरे धर्म की नुक्ताचीनी करना आरंभ कर देता है तो समाज में दरार पड़ जाती है। आधुनिक समाज का कोई भी व्यक्ति लंबा समय दूसरों से अलग नहीं रह सकता इसलिए वह चाहता है कि उसके धर्म में गर्व करने योग्य कुछ ऐसी बातें अवश्य होनी चाहिए जो दूसरों को साथ लेकर चलने एवं भाईचारे की भावना को मज़बूत करने वाली हों। जब कोई प्रचारक समय के समाज की आवश्यकताओं को नज़रंदाज़ करके केवल अतीत के सहारे जीवन बसर करने को प्राथमिकता देने लग जाता है तो वह निराशा के माहौल में प्रवेश कर जाता है।

३. प्रचार-कार्यों को बढ़ाने, सुचारू रूप से

चलाने और हर वर्ग तक पहुंचाने में पुरुषों एवं स्त्रियों का सामूहिक प्रयत्न होता है। जिस समाज में धर्म को किसी विशेष वर्ग, संप्रदाय या समुदाय तक सीमित कर दिया जाए उसमें जल्दी ही ठहराव आ जाता है। समाज का प्रत्येक वर्ग अपने-अपने ढंग से धर्म के जीवन-मूल्यों को कायम रखने और आगे बढ़ाने का काम करता है। हर वर्ग में पुरुषों एवं स्त्रियों के सहयोग के बिना धर्म की भावना को प्रफुल्लित नहीं किया जा सकता। जैसे कि मैक्स वैबर कहता है कि जहां धर्म के प्रचार में स्त्रियां कोई भूमिका अदा नहीं करती, जरतुस्त एवं यहूदी धर्म की भांति उनकी स्थिति धर्म के आरंभ से भिन्न होती है। (Where women played no role in the missionary expansion of a religion, as was the case in Zoroastrianism and Judaism, the situation was different from the very start.--- Max Weber, Economy and Society, page 605)

४. प्रचारक का जीवन लोक-सेवा तथा परमात्मा की शिक्षाओं को लोगों तक ले जाने के लिए समर्पित होता है। इस कार्य के लिए वह तभी लंबे समय तक उत्साहपूर्वक कार्य कर सकता है यदि उसके निजी जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति होती रहे। अगर उसे अपनी आवश्यकताओं के लिए साधन जुटाने पड़ें तो कई बार वह अपने मिशन से भटक जाता है।

जिस भी क्षेत्र में कोई प्रचारक कार्य कर रहा है, उसे उस क्षेत्र में कार्य करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान होनी चाहिए। यदि स्वतंत्र रूप से कार्य करने में कोई रुकावट पैदा होती है तो वह अपने मिशन की पूर्ति के लिए दृढ़तापूर्वक कार्य नहीं कर सकेगा। यह समस्या उस समय अधिक गंभीर रूप धारण कर जाती है, जब कोई संस्था प्रचारक श्रेणी को अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए इस्तेमाल करना आरंभ कर देती है। ऐसे समय में न केवल मन में उदासी की भावना ही पैदा होती है, बल्कि किए जाने वाले कार्य में भी ठहराव आना आरंभ हो जाता है। ❁

कविता

मंगलमय शुभ जीवन हो

*-श्री प्रशांत अग्रवाल**

सदा सर्वदा यही प्रार्थना, मंगलमय शुभ जीवन हो।
प्रभु का पावन ध्यान रहे नित्त, प्रभु की बातों में मन हो।
जब करते भगवान् कृपा, तब मिलता दुर्लभ मनुज तन।
उसका सद्-उपयोग यही है, प्रभु चरणों में डूबे मन।
यही कामना है मेरी, सब सच्चे सुख की ओर बढ़ें।
भवसागर से तर जायें सब औरों को भी पार करें।

**४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ. प्र.)। मो : ०९४११६०७६७२*

सुल्तान-उल-कौम स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया

*-स. सुरजीत सिंघ साहनी**

"सूरा सो पहिचानीऐ जु लरै दीन के हेत ॥
पुरजा पुरजा कटि मरै कबहू ना छाडै खेतु ॥"
के अनुरूप विशिष्ठ व्यक्तित्व के धनी स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया अद्वितीय कुशल नेतृत्व, पराक्रमी, सेवा-भावी, वीरता एवं उच्च आदर्शों के कारण पंथ में 'सुल्तान-उल-कौम' की उपाधि से सम्मानित हुए हैं। सिक्ख शक्ति का स्थायित्व एवं 'आहलूवालिया मिसल' की स्थापना आपका परम आदर्श एवं प्रेरणास्रोत है। सुहृदयी स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया गुरमति विचारधारा के आध्यात्मिक, सामाजिक, धार्मिक एवं भक्ति साधना से संबंधित सिद्धातों एवं आदर्शों से परिपूर्ण थे। आपके चेहरे का जलाल इतना तेज था कि किसी को उनके तेजस्व के आगे आंख उठाने का साहस जुटाना भी मुश्किल होता था क्योंकि ऐसे गुण आपमें विद्यमान थे जो कि एक तेजस्वी, पराक्रमी वीर, योद्धा एवं सेनानायक में होने चाहिए।

आपका जन्म स. बदर सिंघ के गृह ३ मई, १७१८ ई को लाहौर (पाकिस्तान) के निकट ग्राम 'आहलू' में हुआ था। ग्राम आहलू की स्थापना भी सरदार बदर सिंघ जो कि नवाब कपूर सिंघ के संगी-साथी थे, के पड़दादा सरदार साधू सिंघ ने ही की थी। स. जस्सा सिंघ की आयु मात्र ५ वर्ष की हुई थी कि उनके पिता सरदार बदर सिंघ का सन् १७२३ ई में आकस्मिक निधन हो गया। प्रारंभिक संघर्षमयी जीवन में आपने अपनी माता जी से गुरबाणी का गहन अध्ययन जारी रख कई बाणियां कंठस्थ कर प्रोढ़ता हासिल कर ली।

श्री अमृतसर में हुए 'दल खालसा' के समागम में उपस्थित स. जस्सा सिंघ एवं उनकी माता जी का गुरबाणी के प्रति अटूट श्रद्धा एवं प्रेम देखकर नवाब कपूर सिंघ ने प्रसन्न होकर स. जस्सा सिंघ को अमृतपान करवाकर श्रद्धावनत कर दिया। कुछ समय पश्चात् स. जस्सा सिंघ एवं उनकी माता जी दिल्ली में आकर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के महल माता सुंदर कौर जी के आश्रय में रहने लग गये। स. जस्सा सिंघ निरंतर अध्ययन करते हुए आध्यात्मिक गुरबाणी शिक्षा के साथ-साथ अस्त्र-शस्त्र एवं युद्ध-कला में कुशल एवं प्रवीण हो गए। माता सुंदर कौर जी के सानिध्य में निरंतर १० वर्षों तक रहने एवं माता जी द्वारा स. जस्सा सिंघ को आशीर्वाद स्वरूप 'गुर्ज' प्रदान करने से स. जस्सा सिंघ एवं उनकी माता धन्य हो गए। माता सुंदर कौर जी की प्रेरणा एवं आदेश से सन् १७३३ को नवाब कपूर सिंघ ने जलंधर में स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया को अपने संरक्षण में लेकर कुछ समय में ही शूरवीर योद्धा एवं आदर्शवादी बना दिया।

स. जस्सा सिंघ नवाब कपूर सिंघ के साथ धर्म-युद्धों में निरंतर भाग लेकर अपनी अद्भुत वीरता एवं पराक्रम का परिचय देते रहे। सन् १७४६ ई को काहनूंवान के घने जंगलों में घटित 'छोटा घल्लूघारा' जिसमें पंद्रह हज़ार से

**५७-बी, न्यू कालोनी गुमानपुरा कोटा-३२४००७ (राज.) फोन : ९४१३६-५१९१७*

अधिक सिक्ख मरजीवड़े शहादत को प्राप्त हो गए थे। इस युद्ध में स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया ने विषेश भूमिका निभाई।

सन् १७४८ ई. को श्री अमृतसर में आयोजित 'सरबत्त खालसा' में सरदार जस्सा सिंघ 'आहलूवालिया मिसल' का जत्थेदार घोषित कर दिया गया। आहलूवालिया मिसल जत्थेदार स. जस्सा सिंघ के नेतृत्व में तीव्र गती से आगे बढ़ते हुए विशेष प्रकार से शक्तिशाली बन गई। सन् १७३३ से १७५३ तक स. जस्सा सिंघ ने अनेक युद्धों में अग्रणी भूमिका निभाते हुए विजय श्री प्राप्त कर यशस्वी एवं पराक्रमी बने रहे। सन् १७५३ को नवाब कपूर सिंघ ने स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया को सिक्ख नेतृत्व एवं माता सुंदर कौर जी से प्राप्त श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की एक कृपाण सौंपकर परलोकगामी हो गये। यह ऐतिहासिक कृपाण कपूरथला रियासत के संग्राहलय में दर्शनार्थ सुशोभित हो रही है।

सन् १७६२ ई में मलेरकोटला के निकट बहुत दुखदायी 'बड़ा घल्लूघारा' घटित हुआ जिसमें लगभग ३०,००० सिक्ख स्त्री, पुरुष, बच्चे एवं वृद्ध शहीद हो गए। इस युद्ध में स. जस्सा सिंघ ने अपनी युद्ध कोशलता को बहुत शूरवीरता से पेश किया :

जहां शहीदों का रक्त गिरता है, वही से उगता है हर सवेरा।
जहां जलाता है देह दीपक, वहां न आता है फिर अंधेरा।

स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया ने कपूरथला, गोइंदवाल साहिब, बैरोवाल, बैंगुपुर, कोट शिताब, मसानी, सरहाली, सराय नुरूद्दीन इत्यादि क्षेत्रों पर विजय प्राप्त कर कपूरथला को रियासत की राजधानी बनाकर अपना राजशाही सिक्का जारी किया। स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया की शेर दिल, वीरता एवं कर्त्तव्यपरायणता पूर्ण जीवन-आदर्श सदैव खुली किताब की भांति ही रहा है जिसकी जितनी गहराई में अध्ययन किया जाए उतनी नई-नई आदर्श परतें खुलती चली जाती हैं। *"देह सिवा बरु मोहि इहै, सुभ करमन ते कबहूं न टरों ॥"* आपका जीवन आदर्श रहा है।

सिक्ख पंथ की 'सुल्तान-उल-कौम' की उपाधि से सम्मानित महाबली, महादानी, महानधर्मी, महान सिक्ख जरनैल स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया सन् १७८३ को ६५ वर्ष की आयु *"गुरमुखि जनमु सवारि दरगह चलिआ ॥"* के अनुरूप श्री अमृतसर की पवित्र भूमि पर परलोकगामी हो सदा-सर्वदा के लिए अमर हो गए।

शहीदों की चिताओं पर लगेंगे हर वर्ष मेले।
वतन पर मिटने वालों का यही बाकी निशां होगा।

आपका स्मरणीय स्मारक श्री अमृतसर में 'गुरुद्वारा बाबा अटल राय' जी के निकट स्थापित हैं जो मानवीय धर्म, आदर्शों एवं सिद्धातों का प्रेरणास्रोत प्रमाणित हो रहा है।

Final

ग़दर लहर में योगदान डालने वाली बीबी गुलाब कौर

*-सिमरजीत सिंघ**

ज़िला संगरूर की तहसील सुनाम में बख़्शीवाला गांव है। यह गांव सुनाम-लहिरागागा सड़क से ४ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। रेलवे स्टेशन सुनाम इस गांव से ४ किलोमीटर की दूरी पर है। इस गांव में १९वीं शताब्दी के अंतिम दहाके में सिक्ख ज़मीदार परिवार में बीबी गुलाब कौर का जन्म हुआ। बीबी गुलाब कौर का विवाह पास वाले गांव जखेपाल के निवासी स. मान सिंघ के साथ हुआ।

भारत में अंग्रेजों ने अपना राज्य संपूर्ण रूप में स्थापित कर लिया था। सन् १८९७ ई में मलिका विक्टोरिया की सिल्वर जुबली (जयंती) के जशन में भाग (हिस्सा) लेने के लिए सिक्ख सैनिकों का एक जत्था लंडन में गया। वापिसी के समय यह सैनिक कनाडा के प्रसिद्ध राज्य ब्रिटिश कोलंबिया से होते हुए भारत पहुंचे उन्होंने महसूस किया कि कनाडा की धरती भी पंजाब की तरह उपजाऊ है तथा जलवायु भी बहुत उचित है। उनको यहां पर रोज़गार के बेशुमार साधन दृष्टमान हुए। इससे प्रभावित होकर इन्होंने पंजाबियों को वहां जाने के लिए प्रेरित करना शुरू कर दिया। बहादुर पंजाबी अपनी किस्मत अज़माने के लिए कनाडा की ओर रवाना हुए। यह १९०४ ई में हांगकांग होते हुए वैनकुवर जा पहुंचे। इन लोगों में अधिकतर मालवा तथा दुआबा क्षेत्र के अशिक्षित किसान थे। सन् १९०८ ई तक लगभग पांच हज़ार पंजाबी कनाडा पहुंच चुके थे। इनमें से अधिकतर सिक्ख थे। कुछ समय बाद ही यह संख्या आठ हज़ार को पार कर गई।

पंजाब से जा रहे किसानों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। इनके परिश्रमी स्वभाव के कारण पश्चिमी खेत मज़दूर इनसे ईर्ष्या करने लग पड़े। कनाडा सरकार ने भी ईर्ष्या के कारण सन् १९१४ ई में कानून पारित कर पंजाबियों का कनाडा आना बंद कर दिया। इंग्लैंड की शाही सरकार ने कनाडा और अमेरिका की सरकारों पर दबाव बनाकर हिंदोस्तानियों का अपने-अपने देश में परिवास रोक दिया। इन पाबंदियों के रोष में कामागाटामारू जहाज़ की घटना घटित हुई। राहत की बात यह थी कि इस कानून के बनने से पहले पंजाबियों ने कनाडा में अपने पांव जमा लिए थे। कई लोगों ने अपने घर बना लिए थे और कई लोगों ने संपत्ति बना ली थी। सिक्खों ने कुछ गुरुद्वारा साहिबान भी स्थापित कर दिए थे। इन पंजाबियों ने कामागाटामारू जहाज़ के यात्रियों की मदद भी की। भारतियों ने इन देशों में आने के लिए पेसेफिक कोष्ट के एशियन हिस्से पर आना शुरू कर दिया। पाबंदियों से बचने के लिए अमेरिका की बस्ती फिलीपीन में छ: माह रहकर, वहां की नागरिकता हासिल कर ली जाती। इस तरह इनको अमेरिकी नागरिकता का स्थान प्राप्त हो जाता था और ये अमेरिका चले जाते थे। इस तरह फिलीपीन में बड़ी संख्या में हिंदोस्तानी रहकर अमेरिका जाने का इंतज़ार कर रहे थे। बीबी गुलाब कौर भी उज्ज्वल भविष्य की आशा लेकर और

**संपादक, 'गुरमति ज्ञान' एवं 'गुरमति प्रकाश'।*

रोज़गार की तलाश में अपने पति स. मान सिंघ के साथ मनीला पहुंच गई। इनके साथ गांव दौले सिंघ वाला का स. जीवन सिंघ भी मनीला आया था ताकि आगे अमेरिका पहुंचा जा सके।

सरकार को अमेरिका के पश्चिमी किनारे के विकास हेतु भी मज़दूरों की ज़रूरत थी। अन्य देशों के मज़दूरों से पंजाबियों को अधिक परिश्रमी तथा विश्वसनीय समझा जाता था। पंजाबियों को मज़दूरों में शामिल करना शुरू कर दिया गया। भारतीय मज़दूरों की शिकागो तथा न्यूयार्क में सहायता के लिए भारती अमेरिकन लोगों ने इंडो अमेरिकन सुसायटी स्थापित कर ली। इसके अतिरिक्त 'इंडिया हाऊस' भी स्थापित कर भारत से आगे पढ़ने के इच्छुक विद्यार्थियों को भी आर्थिक सहायता देने का प्रबंध किया गया। इस उद्धम द्वारा लाला हरदिआल, संत तेजा सिंघ, भाई परमानंद के अतिरिक्त भाई जवाला सिंघ, भाई संतोख सिंघ और भाई वसाखा सिंघ ने योगदान दिया। इन भारतियों के साथ कई देश प्रेमी लोग भी वहां पहुंच गए।

भारत से गए मज़दूरों और पश्चिमी देश के मज़दूरों में किसी न किसी बात को लेकर तनाव बना रहता था। भारतियों को किसी प्रकार की रहन-सहन की सुविधा नहीं दी जाती। भारतियों के अधिकारों की रक्षा हेतु भाई भाग सिंघ की अध्यक्षता तले 'हिंदोस्तानी ऐसोसिएशन' स्थापित की गई। उसके द्वारा पंजाबी में 'प्रदेसी खालसा' तथा उर्दू में 'स्वदेश सेवक' नामक दो पत्रिकाएं प्रकाशित करनी शुरू की गईं। इन पत्रिकाओं में प्रकाशित समाचार तथा निबंधों ने हिंदोस्तानियों को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करने की भूमिका निभानी शुरू की। इसके सदका १५ दिसंबर, १९११ ई को 'युनाईटिड इंडियन लीग' स्थापित हुई।

सन् १९१२ ई में पोर्टलैंड में 'हिंदोस्तानी ऐसोसिएशन ऑफ पेसिफिक कोष्ट' स्थापित की गई। बाबा सोहन सिंघ भकना को इस ऐसोसिएशन का अध्यक्ष नियुक्त किया गया। मई, १९१३ ई को एक बड़ा समारोह किया गया। इस समारोह के दौरान 'ग़दर आश्रम' खोलने का निर्णय लिया गया और ग़दर पार्टी बनाने का भी निर्णय किया गया। ग़दर पार्टी का मुख्य कार्यालय सानफ्रांसिस्को में और शाखाएं अमेरिका व कनाडा में खोलने का निर्णय हुआ। इस पार्टी का मुख्य कार्य भारत में शस्त्र क्रांति द्वारा अंग्रेज राज्य को समाप्त कर स्वतंत्रता लेकर आना। भारतियों में जागृति पैदा करने के लिए 'ग़दर' नामक साप्ताहिक पत्रिका प्रकाशित करने का निर्णय हुआ। नवंबर, १९१३ ई में 'गदर' उर्दू भाषा में प्रकाशित होना आरंभ हो गया तथा कुछ सप्ताह के बाद पंजाबी में भी प्रकाशन आरंभ हो गया। इन पत्रिकाओं को अमेरिका, कनाडा के अतिरिक्त पूरबी (पूर्व) एशिया के देशों में भी विभाजित किया जाने लगा। बाद में ये हिंदी, गुजराती, पशतो, बंगाली और नेपाली भाषाओं में भी प्रकाशित होने लगा। भारतीय सैनिकों को प्रेरित करने के लिए 'हिंदोस्तानी सिपाही' नामक पत्रिका भी प्रकाशित की जाने लगी।

लाला हरदिआल के सविटज़रलैंड चले जाने के बाद बाबा सोहन सिंघ भकना ने पार्टी के कार्यालय में रहना आरंभ कर दिया। भाई संतोख सिंघ को जनरल सचिव बनाया गया। पत्रिका के संपादन एवं प्रकाशन का कार्य कोटला बौध सिंघ के भाई हरनाम सिंघ के सुपुर्द किया गया। पार्टी ने अपने सदस्यों को हथियार चलाने की शिक्षा देनी आरंभ की। इस शिक्षा के दौरान एक बार बम फटने से भाई हरनाम सिंघ की बाजू उड़ गई। इसलिए उसका नाम टुंडीलाट प्रसिद्ध हो गया। पूरबी एशिया देशों में भी गदर पार्टी ने बहुत प्रचार किया। गुरुद्वारा

साहिबान पार्टी के प्रचार के मुख्य केंद्र बन गए।

सन् १९१४ ई में प्रथम विश्व युद्ध शुरू हो जाने के कारण ग़दर पार्टी के युगांतर आश्रम में मीटिंग हुई तथा समय की नज़ाकत का फायदा उठाकर हिंदोस्तान में अंग्रेज सरकार के विरुद्ध ग़दर मचाने का निर्णय लिया गया। २२ अगस्त, १९१४ ई को बाबा सोहन सिंघ भकना अपने २६ अन्य साथियों सहित वैनकुवर से हिंदोस्तान की तरफ चल पड़ा। उसके पीछे अन्य कई ग़दरी हिंदोस्तान की तरफ चल पड़े।

सानफ्रांसिस्को अमेरिका से स. कोरियां नाम के समुद्री जहाज़ द्वारा कुछ ग़दरी आगू मनीला आए। मनीला की 'ग़दर पार्टी' ने उनका हार्दिक अभिनंदन किया और गुरुद्वारा साहिब में एकत्रता का प्रबंध किया गया। स्थानीय लोगों ने ग़दर पार्टी द्वारा हिंदोस्तानियों को बगावत की अपील का पहले ही पता था। इस सम्बंधी 'ग़दर' नामक समाचार पत्र में पहले ही प्रकाशित हो चुका था। मनीला में बीबी गुलाब कौर ने ग़दरियों की बहुत मदद की। मनीला के गुरुद्वारा साहिब में की गई अपीलों और भाषाओं का संगत के मन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा, मनीला से एक बहुत बड़ा जत्था भारत आने के लिए तैयार हो गया, जिसमें बीबी गुलाब कौर व उसका पति स. मान सिंघ भी शामिल था परंतु जब जत्था मनीला से भारत के लिए रवाना होने लगा तो स. मान सिंघ का मन बहक गया और उसने भारत जाने से इन्कार कर दिया। इस घटना का बीबी गुलाब कौर पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और उसने घर त्यागकर सदैव के लिए ग़दर पार्टी में कार्य करने का निश्चय किया। यह जत्था मनीला से जापान होते हुए हांगकांग पहुंच गया। सितंबर, १९१४ ई में हांगकांग के सिक्खों ने गुरुद्वारा साहिब में भारी मात्रा में इकट्ठ किया। इस एकत्रता में सानफ्रांसिस्को से आए ग़दर पार्टी के नेता भाई केसर सिंघ ठठगढ़, भाई जवाला सिंघ ठट्ठीयां, भाई शेर सिंघ बेंईपूई, भाई जीवन सिंघ दौले सिंघ वाला, हाफिज़ अब्दुला जगराउं, रहिमत अली वज़ीद के, भाई बख़्शीश सिंघ खानपुर, भाई लाल सिंघ साहिबआणा, भाई जगत सिंघ बिंझण, भाई ध्यान सिघं उमरपुर, भाई ध्यान सिंघ बगसीपुरा, भाई चंदा सिंघ, भाई सरजन सिंघ फतहिगढ़, भाई बाबू सिंघ नाहमां तथा अन्य बहुत-से स्थानीय आगुओं ने भाग लिया। इस इकट्ठ में भारतियों को अपील की गई कि वो देश की स्वतंत्रता हेतु ग़दर पार्टी को बढ़-चढ़कर सहयोग दें, जो भारत की स्वतंत्रता के लिए अंग्रेज सरकार के साथ युद्ध करने जा रही है। इस एकत्रता में बीबी गुलाब कौर भी मनीला से हांगकांग भाग लेने के लिए आई। उन्होंने एकत्रता में जोशीली कविता पढ़कर सभी का रक्त गर्मा दिया। कविता के बोल थे :

हिंदोस्तानियों! होश करो कायम, हिम्मत करो, शरमाउण दी लोड़ की ए ?

चलो मुल्क अंदर चल ग़दर करीए, हुण गुलाम कहाउण दी लोड़ की ए ?

उठो नाल कृपाण दे हक्क लईए, बुरे हाल कराउण दी लोड़ की ए ?

जो कुझ पास है मुल्क तों वार देवो, पिच्छे रक्ख रखाउण दी लोड़ की ए ?

ग़दर शुरू है, वीरनो! चलो जल्दी, बैठ तक्कण तकाउण दी लोड़ की ए ?

तुरो, करो हिम्मत, जल्दी ग़दर करीए, बार-बार दुहराउण दी लोड़ की ए ?

कविता के बाद बीबी गुलाब कौर ने अपनी कलाई से चूड़ियां उतार दीं और हवा में लहराकर कहा, "अगर इकट्ठ में शामिल कोई व्यक्ति देश को स्वतंत्र करवाने से पीछे हटना

चाहता है तो वह ये चूड़ियां पहन ले। अगर मर्दों में हिम्मत नहीं तो हम स्त्रियां तैयार हैं। हम युद्ध के मैदान में जाएंगी। ऐसे मर्द हमारे घर और चूल्हा-चौंका संभाल लें।" बीबी गुलाब कौर के इस भाषण का सारांश नैशनल आर्काइवज़ ऑफ इंडिया, नई दिल्ली ने अपने रिकार्ड में संभाला हुआ है।

१५ फरवरी, १९१५ ई तक अलग-अलग देशों से २३१२ ग़दरी सैनिक तोषामारू जहाज़ में सवार होकर हिंदोस्तान पहुंच गए। इनमें बीबी गुलाब कौर भी इस जत्थे के साथ कलकत्ते (कोलकाता) पहुंच गई। रास्ते की बंदरगाहें-- सिंगापुर, पिनांग और रंगून में हिंदोस्तानियों को ग़दर पार्टी में शामिल होने के लिए बीबी गुलाब कौर प्रेरित करते रहे साथ ही वह जहाज़ में यात्रा कर रहे साथियों को चढ़ती कला में रहने के लिए प्रेरित करते रहे। इनके साथ सुनाम के नज़दीकी गांव दौले सिंघ का स. जीवन सिंघ भी हिंदोस्तान पहुंचा। जब यह जत्था कोलकाता पहुंचा तो पुलिस अधिकारियों ने इनके ख़ानदान के बारे में पूछताछ की। बीबी गुलाब कौर ने अपने मायके और ससुराल वालों की पूछताछ होने के डर से अपनी पहचान स. जीवन सिंघ की पत्नी के रूप में करवा दी।

समुद्री तोषामारू जहाज़ के सभी यात्रियों को कोलाकाते में कैद कर लाहौर के नज़दीकी एक रेलवे स्टेशन पर लाया गया। इनमें से १०० यात्रियों को मुलतान के कारावास में भेज दिया गया। इसके अतिरिक्त ७३ यात्रियों को सी आई डी. के अधिकारियों के आगे पेश होने के लिए लुधियाना भेज दिया गया। इस समय बीबी गुलाब कौर और स. जीवन सिंघ द्वारा पुलिस को दी गलत जानकारी के कारण दोनों रिहा हो गए। इनके साथ इसी जहाज़ में स. अमर सिंघ भी आया था और ये तीनों गांव कोटल आ गए।

धीरे-धीरे हिंदोस्तान पहुंचने वालों की संख्या आठ हज़ार तक पहुंच गई। इस कार्यवाही के बारे में पता चलते ही अंग्रेज चौकस हो गए। लगभग २५०० ग़दरियों को उनके गांवों में ही नज़रबंद कर दिया गया। इनमें से लगभग ४०० को अधिक ख़तरनाक समझते हुए कैद कर लिया गया। इससे पार्टी की कार्यवाही को बहुत धक्का लगा। नये नेताओं ने स्थिति को शीघ्र ही संभाल लिया। छोटी पुस्तकें प्रकाशित कर लोगों को जागृत करना आरंभ कर दिया।

बीबी गुलाब कौर, स. जीवन सिंघ तथा स. अमर सिंघ ने अपना संपर्क बाबा हरनाम सिंघ टुंडीलाट के साथ कायम किया, जिन्होंने इन तीनों को ग़दर लहर की विशेष सेवाओं पर लगा दिया। स. जीवन सिंघ तथा मनीला से आए अन्य क्रांतिकारियों को स. करतार सिंघ सराभा की अगुवाई वाले 'सैनिक दस्ते' में शामिल कर दिया गया। इनका कार्य क्षेत्र सतलुज के पार का क्षेत्र था। बीबी गुलाब कौर का कार्य ज़िला होशियारपुर के गांव हरियाणा के क्षेत्र की स्त्रियों में प्रचार करने का था।

जब पार्टी ने पूर्णत: संस्था का रूप धारण किया तो बीबी गुलाब कौर को पार्टी के मुख्य कार्यालय श्री अमृतसर में बुला लिया गया। क्रांति के लिए तैयारियां शुरू हो गई। पार्टी का मुख्य कार्यालय श्री अमृतसर से बदलकर लाहौर बनाया गया। बीबी गुलाब कौर जी को लाहौर भेज दिया गया। इनको लाहौर के रेलवे स्टेशन के पास मूल चंद की सराय और बंसी लाला के मंदिर में कमरा लेकर दिया गया। आप पार्टी की रिसेप्शनिस्ट के रूप मे कार्य करने लगीं। यह पूरा दिन चर्खा कातते रहते। इनको लाहौर में पार्टी के गुप्त कार्यालय और मुख्य आगुओं के ठिकाने की पूर्ण जानकारी होती थी। अगर कोई पार्टी के कार्यालय में जाना चाहता था तो

उसको पहले बीबी गुलाब कौर से मिलकर संपूर्ण जानकारी देनी पड़ती थी। जब बीबी गुलाब कौर जी की पूर्ण तसल्ली हो जाती थी तब ही वह आगे किसी को मिल सकता था। पार्टी की गुप्त हिदायत के अनुसार फील्ड से लाहौर आने वाले प्रत्येक अधिकारी तथा आगु को बीबी गुलाब कौर से आज्ञा लेनी पड़ती थी। मात्र उनके द्वारा बनाए गुप्त शब्द द्वारा ही सदस्यों के गुप्त ठिकाने पर पहुंचा जा सकता था। ग़दरियों की डाक एक जगह से दूसरी जगह पहुंचाने का कार्य आप अपने हाथों से करते थे। अलग-अलग स्थानों पर जाने के लिए आपको कई तरह के वेश धारण करने पड़ते थे, कभी यह चूड़ियां, गज़रे बेचने वाली का वेश धारण करते, कभी किसी अन्य रूप में एक जगह से दूसरी जगह पहुंचते थे।

जर्मनी के अतिरिक्त किसी अन्य मुल्क द्वारा कोई माली (वित्ती) सहायता प्राप्त नहीं हुई। जो शस्त्र बाहर से भेजे जाते वो रास्ते में ज़ब्त कर लिए जाते। १२ फरवरी, १९१५ ई को पार्टी की कार्यकर्त्ता कमेटी ने फैसला लिया कि २१ फरवरी को बगावत आरंभ कर दी जाएगी। इसकी ख़बर मुखबिर (जासूस) कृपाल सिंघ द्वारा सरकार के पास पहुंच गई। पता चलने पर ग़दरियों ने २१ फरवरी की जगह १९ फरवरी का दिनांक निश्चित कर लिया। गदरी गांव कोटला नौध सिंघ में आ गए तो गांव में घुसकर प्रचार करने लगे किंतु अंग्रेज सरकार सुचेत हो चुकी थी और ग़दरियों को पकड़ना आरंभ हो चुका था। लाहौर में कई जगह छापामारी कर लगभग १३ प्रमुख ग़दरियों को गिरफ्तार कर लिया और सैनिक छावनियों में सेना को सावधान कर दिया गया। ग़दरियों द्वारा बनाया गया गदर मिशन असफल हो गया।

लाहौर से निकलकर आप स. अमर सिंघ के गांव होशियारपुर चले गए। पुलिस को सूचना मिलने पर इनको छापा मारकर गिरफ्तार कर लिया गया। इनको पनाह देने के कारण स. अमर सिंघ को दो वर्ष की कड़ी कैद की सज़ा हुई थी। बीबी गुलाब कौर पर राजनैतिक कारणों के कारण अंग्रेज सरकार ने न्यायालय में कोई मुकद्दमा न चलाया गया इनको १८१८ ई की बदनाम बंगाल दंडधारा अधीन कारावास में बंद कर दिया गया। सन् १९२१ ई में बीबी गुलाब कौर को रिहा किया गया, रिहा होने के बाद यह स. अमर सिंघ के गांव कोटला नौध सिंघ में आ गए। इस गांव में भी पुलिस इन पर कड़ी निगरानी रखती थी। यहीं पर इनकी मृत्यु हो गयी। पुलिस का विचार था कि अगर यह मर्द होती तो इसको भी अन्य ग़दरियों की तरह फांसी से कोई नहीं था बचा सकता।

पकड़े गए सभी ग़दरियों को लाहौर की सेंट्रल जेल में इकट्ठा कर लिया गया, स्पेशल अदालत लगाकर लाहौर साज़िश के केसों में सुनवाई आरंभ की गई। कुल २९१ ग़दरियों के विरुद्ध केस दायर किए गए। इनको सज़ाएं दी गईं। ४२ व्यक्तियों को दोषमुक्त समझकर छोड़ दिया गया। जिस सैनिक टुकड़ियों ने बगावत की थी उनको कड़ी सजाएं दी गईं। इनमें से २१ को फांसी तथा ६५ को आजीवन जलावतन की सज़ा दी गई। इनकी संपत्ति सरकार द्वारा ज़ब्त कर ली गई। सिंगापुर में स्थित ५ लाईट इन्फेंट्री के ७०० आदमियों ने १५ फरवरी की बगावत की थी और किले पर कब्ज़ा कर लिया था। अंग्रेज सरकार द्वारा उनकी कार्यवाही को भी दबा दिया गया। कुल १२६ सैनिकों का कोर्ट मार्शल किया गया, जिनमें ३७ को फांसी तथा ४१ को आजीवन जलावतन की सज़ा दी गई। अन्य भी बहुत सारों को तरह-तरह की सज़ाएं सुनाई गईं।

हमारी चुनौतियां : बच्चों का संदर्भ

-डॉ. रामनिवास शर्मा*

आज कंप्यूटर के युग में विकास की अनंत संभावनाएं बढ़ी हैं, वहीं दूसरी ओर विनाश के संकेत भी मिलने लगे हैं। बच्चे किसी भी देश का भविष्य होते हैं। आज स्कूली बस्तों का बोझ इतना बढ़ गया है कि उन्हें स्कूल का काम निपटाने से ही फुर्सत नहीं मिलती। थोड़ा-बहुत समय बचता भी है वह कंप्यूटर, टी.वी. की भेंट चढ़ जाता है। प्यार और वात्सल्य से भरी मां की गोद नानी-दादी की कहानियां उनके लिए किसी दूसरी दुनिया की चीज़ बन गए हैं। टी. वी. के अश्लील-हिंसक कार्यक्रम और हैरी पॉटर जैसे जादूगरी से भरे कथानक उनमें आत्म चेतना पैदा करने के बजाय आत्म हनन के बीज़ बो रहे हैं। परिणाम दिखाई देने लगे हैं, बाल-हिंसा और यौनाचार मीडिया के विषय बन गए हैं। समाज शास्त्री चिंतत है, स्थिति दिन-बदिन हाथ से निकल रही है, बच्चों को सही मार्ग दर्शन नहीं मिल रहा है। इस चिंता को एक कल्प कथा (मिथक) के द्वारा भी समझा जा सकता है। कुम्हार कच्ची मिट्‌टी से घड़ा बनाता है। जिस काम के लिए उसे तैयार करता है, पहले उसी चीज़ से उसे बचाकर रखता है। पकने तक उसे बोझ से बचाता है, पानी से दूर रखता है, तेज़ धूप नहीं लगाता, तेज आग में भी नहीं रखता। जब घड़ा आंवा में पूरी तरह पक जाता है और कुम्हार अपने विश्वास की मुहर लगा देता है, उसके बाद चाहे धूप में पड़ा रहने दो, उसका कुछ न बिगड़ेगा।

ठीक ऐसी ही स्थिति बच्चों की परवरिश की है। बच्चों को भी पहले-पहल उन सारी स्थितियों से बचाकर रखना है। बच्चों को आयु में किससे रोकना है, कब-कब रोकना है और किस समय क्या कराना है, माता-पिता को इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए। बच्चों की आयु के हिसाब से ही उनका मानसिक स्तर होता है। जितनी उनकी आयु है, उसी अनुपात में उनकी शारीरिक क्षमता होती है। काम चाहे शारीरिक हो या बौद्धिक, यदि उम्र से ज्यादा काम लेना शुरू कर देंगे तो निश्चित ही बच्चे का संतुलन बिगड़ जाएगा वह समय से पूर्व परिपक्व होकर बूढ़ा हो जाएगा। मीडिया सब कुछ तो सिखा रहा है। शक्तिमान सीरियल को देखकर कितने ही बच्चों ने छत से छलांग लगा दी। टी. वी. पर फांसी का दृश्य देखकर कई बच्चे स्वयं को फांसी लगा बैठे। कारण स्पष्ट हैं, उनकी बुद्धि विकसित नहीं हो पाई थी। बच्चे तो रोमांच से सब कुछ देखते हैं। वे असल और नकल में भेद नहीं कर पाए। जिस प्रकार बच्चों के लिए खाने, पहनने, खेलने की अलग-अलग वस्तुएं होती हैं, ठीक वैसे ही उनकी बुद्धि के अनुकूल उन्हें सीरियल दिखाने चाहिए।

बच्चों को लेकर स्थिति भले ही चिंताजनक है फिर भी बहुत-कुछ शेष है जो हमारे भविष्य को बचा सकता है। यदि हम पूरी लगन और इच्छा शक्ति के द्वारा इस धूल को हटाना चाहते हैं तो इसका एकमात्र रास्ता पुस्तकों से होकर

*रीडर, हिंदी विभाग, पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला-१४७००२ (पंजाब)

जाता है। सवाल यही उठता है कि बच्चों को पुस्तकों के साथ कैसे जोड़ें। हिंदी में बाल साहित्य के नाम से कई पत्रिकाएं छपती हैं-- चंदा मामा, लोट-पोट, नंदन चकमक, चंपक, गुड़िया, बालहंस, समझ-झरोखा इत्यादि। इन पत्रिकाओं का छपना ही काफी नहीं बल्कि देखना यह है कि मीडिया की चकाचौंध के सामने बच्चों के बीच अपनी उपस्थिति किस रूप में दर्ज कराती है। क्या बच्चे टी वी को छोड़कर इन पत्रिकाओं के पन्ने पलटने को तैयार हैं? मैं समझता हूं कोई भी बाल साहित्य खुद चलकर बच्चों तक नहीं आएगा, इसमें बहुत बड़ी जिंमेवारी माता-पिता/अभिभावकों की भी है। हम छोटी उम्र में बच्चों को कंप्यूटर टी वी मोबाइल गेम्ज़, यहां तक कि कार भी चलाना सिखा देते हैं लेकिन पुस्तकें पढ़नी नहीं सिखाते। बच्चों का पुस्तकों के महत्त्व से परिचय नहीं कराया जाता। बच्चों को उपहार के रूप में चॉकलेट, टॉफियां, गेम्ज़ आदि कम दें बल्कि उनकी आयु और रुचि के अनुकूल पुस्तकें दें। पुस्तकें सरल भाषा में हों, रंगीन आकर्षण चित्र हों। ज्ञान-विज्ञान की बातें पहले-पहल उन्हें छोटी-छोटी कहानियों के रूप में समझायी जाएं। कभी-कभी उनके साथ बैठकर उन्हें पढ़कर सुनाएं। आपकी कहानी सुनाने की शैली बाल मनोविज्ञान के निकट हो। धीरे-धीरे उनमें पुस्तकों के प्रति रुचि बढ़ेगी, इसके लिए बड़े सब्र की ज़रूरत भी होगी। बच्चों पर दबाव (बोझ) डालकर उन्हें पढ़ने के लिए मज़बूर नहीं कर सकते, बल्कि धीरे-धीरे बच्चों को पुस्तकों से जोड़ें। उनके प्रति उनकी रुचि बढ़ाएं। बुनियादी बात यह है कि बाल साहित्य उनके स्तर का हो, बाल मनोविज्ञान पर आधारित हो, समय के हिसाब से उसमें नई बात कही गई हो।

हमारे घर में लगभग १४-१५ महीने की बच्ची है। हमनें एक साल की उम्र से ही खिलौनों के साथ छोटी-छोटी रंगीन पुस्तकें रखनी शुरू कीं। मेरा तीन महीने का अनुभव यह बताता है कि थोड़े-बहुत पन्नों का फाड़ देना तो स्वाभाविक है, अन्यथा पुस्तकों के पन्नों को इतनी सावधानी से उलटती है जैसे १५ महीने की न होकर तीन-साढ़े तीन साल की हो। सवाल अभी पढ़ने का नहीं है, बल्कि बच्चे में पुस्तक के प्रति रुचि विकसित करने का है। छोटे बच्चे जैसे एक ही खिलौने से ज्यादा देर नहीं खेलते, ठीक वैसे एक ही पुस्तक ज्यादा देर नहीं देखते। जैसे ही पुस्तक थोड़ी-बहुत फटे या पुरानी लगे, उसे नए खिलौनों के साथ नई पुस्तक भी लाकर दें। थोड़े-से प्रयास के बाद आप देखेंगे कि आप अपने मिशन में सफल हो रहे हैं। जब नींव पड़ जाती है तो मकान के बनने की संभावना भी बढ़ जाती है। बच्चे को जिज्ञासु और कल्पनाशील बनाना बहुत आवश्यक है। बाल्यावस्था बीत जाने के बाद शिक्षा देना और उसके चरित्र का परिष्कार करने के लिए कोई रुचि विकसित करना बड़ा ही कठिन होता है। अत: बचपन में ही मज़बूत नींव रखी जानी चाहिए। प्रत्येक बालक गुणों की खान के समान है। शिक्षा एक जौहरी की भांति बालक के जीवन रूपी हीरे को तराशकर उसका वास्तविक स्वरूप उजागर करती है। बालक के तीन स्कूल होते हैं-- घर, स्कूल तथा समाज का वातावरण। पहला स्कूल घर है। हम ही बच्चे के पहले शिक्षक होते हैं। शेष बातें तो बाद की हैं। ये सारे कार्य बड़े ही धैर्य और परिश्रम के हैं। सुनने में कुछ बातें बड़ी ही सरल लगती हैं परंतु व्यवहारिक रूप में देखें तो बड़ी ही पेचीदा होती हैं। फिर भी हमें प्रयास जारी रखना

चाहिए। इस संदर्भ में एक बात और भी याद रखें कि जब आप बच्चे को कोई पुस्तक पढ़ाते हैं तो इस दौरान सिर्फ उसे पढ़ाते ही नहीं, बल्कि बच्चे के साथ आपसी प्रेमपूर्ण संवाद भी स्थापित करते हैं। ऐसा करने से आपके और बच्चे के बीच माधुर्य बढ़ता है। पुस्तकें केवल बच्चों का ही नहीं बल्कि अभिभावकों का भी मार्गदर्शन करती हैं कि वे अपने बच्चों की किस तरह से परवरिश करें। पुस्तकें अच्छी दोस्त बन सकती हैं, आपकी भी और आपके बच्चे के भी। ज़रा हाथ बढ़ाकर तो देखें!

मैं समझता हूं कि बाल साहित्य केवल शहरी या संपन्न घरानों तक सीमित न रहे बल्कि जन-साधारण के बच्चों तक पहुंचे। इसके लिए एक बहुत बड़ी भूमिका प्रकाशक वर्ग की भी होगी। बाल साहित्य का प्रकाशन सस्ता हो और सामान्य आदमी की पहुंच तक हो। आज प्रकाशन का कार्य पूरी तरह व्यावसायिक हो गया है, देश के, समाज के प्रति कर्त्तव्य की बात बहुत पीछे छूट गई है। प्रतिभा किसी बपौती नहीं है, जो साधनहीन, पिछड़े इलाकों के बच्चे हैं, उनमें भी प्रतिभा है, आवश्यकता है, परिवेश की और उसे विकसित करने की। सरकारी पुस्तकालयों/संस्थाओं द्वारा बाल साहित्य की खरीद भी इस बात की कसौटी नहीं है कि ये साहित्य बच्चों के बीच अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहा है। लाखों रुपयों की पुस्तकें दीमक का आहार (भोजन) तो बन जाती हैं परंतु पाठकों तक नहीं पहुंचती। यदि बच्चों को इस खतरनाक स्थिति से उभारना चाहते हैं तो इसका एकमात्र रास्ता पुस्तकों के बीच होकर जाता है और इसके लिए घर, स्कूल, समाज सभी को सतर्क रहना होगा। स्थिति बिगड़ी अवश्य है परंतु हाथ से पूर्णत: निकली नहीं है। आओ थोड़ा प्रयास तो करें।

उपहार ऐसा जो जीवन भर याद रहे

यह बात हर एक आम व खास व्यक्ति के मन को कचोटती रहती है कि वो अपने मित्रों, सम्बंधियों को यदि उपहार दे तो क्या दे? किसी के जन्म-दिन आदि या किसी विशेष दिवस पर किसी को कुछ भेंट किया जाए तो ऐसा उपहार हो जिसे स्वीकार करने वाला जिंदगी भर याद रखे। इसके लिए अब ज्यादा सोचने और चिंता की जरूरत नहीं है। जीवन भर का उपहार है 'गुरमति ज्ञान'। उपहार भी ऐसा कि जब हर माह मित्र आदि के घर पर जाकर डाकिया 'गुरमति ज्ञान' की प्रति थमाएगा तो आपका मित्र हर माह आपका शुक्रिया करता नहीं थकेगा। आप अपने मित्र या किसी सम्बंधी को केवल १००/- रुपये में उपहारस्वरूप 'गुरमति ज्ञान' का आजीवन सदस्य बना दीजिए और हासिल कीजिए अपने मित्र की जीवन भर की खुशियां। यह सौदा बेहद सस्ता एवं लाभकारी रहेगा। आज ही मनीआर्डर या बैंकड्राफ्ट के जरिए चंदा भेजकर अपने मित्र या सम्बंधी को 'गुरमति ज्ञान' का आजीवन सदस्य बनाकर उसे इस बहुमूल्य 'उपहार' से निवाजें। *-संपादक।*

ख़बरनामा

गुरमति व धर्म प्रचार की लहर को प्रफुल्लित करने हेतु बच्चों के धार्मिक मुकाबले करवाने अत्यंत आवश्यक : जत्थे: अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : ५ अगस्त : गुरमति व धर्म प्रचार की लहर को प्रफुल्लित करने हेतु बच्चों के धार्मिक मुकाबले करवाने अत्यंत आवश्यक हैं। इन विचारों को जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के अनन्य सेवक बाबा पल्हा जी के माता बीबी संती जी की वार्षिक स्मृति में स्थानीय गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी एवं गांव बुताला की संगत द्वारा आयोजित वार्षिक गुरमति समारोह में प्रकट किया। जिसमें सिक्ख रहित मर्यादा एवं सिक्ख इतिहास के विषय पर अलग-अलग स्कूलों के बच्चों के दसतारबंदी, कविता, लैक्चर, वार्तालाप, कुइज़, कीर्तन व कवीशरी मुकाबले करवाए गए।

धार्मिक समारोह के दौरान उन्होंने कहा कि ऐसे मुकाबले करवाने से जहां बच्चों को गुरबाणी, गुरमति और सिक्ख इतिहास का बहुमूल्य ज्ञान मिलता है, वहीं स्कूली शिक्षा के साथ-साथ उनकी शख़्सियत का भी विकास होता है। उन्होंने कहा कि अगर प्रारंभ से ही बच्चों को गुरबाणी के साथ जोड़ा जाए तो वो कौम का भविष्य सुधारने में महत्त्वपूर्ण योगदान डाल सकते हैं। उन्होंने कहा कि बच्चे देश व कौम का भविष्य होते हैं और उनकी शख़्सियत को संवारने में माता-पिता, अध्यापक और धार्मिक शख़्सियतों की अहम भूमिका होती है। उन्होंने इस मौके पर गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी को शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की तरफ से एक लाख रुपए की सहायता देने का एलान भी किया।

गणमान्य सज्जनों एवं स्थानीय संगत द्वारा जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, को बाबा पल्हा जी की तस्वीर, मोमैंटो, श्री साहिब, लोई एवं गुरु-घर की बख़्शिश सिरोपाउ देकर सम्मानित किया। इस दौरान स. दिलजीत सिंघ बेदी अतिरिक्त सचिव शिरोमणि कमेटी, स. गुरविंदर सिंघ निजी सहायक अध्यक्ष एवं भारी मात्रा में संगत मौजूद थी।

जत्थेदार अवतार सिंघ को 'शिरोमणि सेवक' की उपाधि दी गई

श्री अमृतसर : १० सितंबर : अवतार सिंघ अध्यक्ष, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर, जत्थेदार को अपने कार्यकाल के दौरान सिक्ख पंथ की चढ़दी कला, शिक्षा, सिक्खी के प्रचार-प्रसार एवं मानवीय भलाई हेतु की गई सेवाओं के बदले श्री अकाल तख़्त साहिब द्वारा पौराणिक धार्मिक रिवायतों के अनुसार 'शिरोमणि सेवक' की उपाधि से सम्मानित किया गया है। श्री अकाल तख़्त साहिब की फसील से सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ ने एलान करते हुए कहा कि सिक्ख कौम की प्रतिनिध संस्था शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के गत् दस वर्षों से निरंतर अध्यक्ष एवं श्री गुरु ग्रंथ साहिब विश्व यूनिवर्सिटी के चांस्लर के रूप में जत्थेदार अवतार सिंघ द्वारा सिक्खी के प्रचार-प्रसार, प्राकृतिक आफ़तों के समय मानवीय

भलाई हेतु की गई मूल्यवान और ऐतिहासिक सेवाओं का सम्मान करते हुए गुरु-पंथ के सर्वोच्च स्थान श्री अकाल तख़्त साहिब से 'शिरोमणि सेवक' की पदवी से सम्मानित किया गया है। इसके उपरांत सिंघ साहिब श्री अकाल तख़्त साहिब सहित, सिंघ साहिब तख़्त श्री केसगढ़ साहिब, सिंघ साहिब ज्ञानी मल्ल सिंघ, कार्यकारी सिंघ साहिब तख़्त श्री दमदमा साहिब, सिंघ साहिब ज्ञानी गुरमुख सिंघ, सिंघ साहिब तख़्त श्री पटना साहिब, सिंघ साहिब ज्ञानी इकबाल सिंघ, तख़्त श्री हजूर साहिब के ग्रंथी भाई राम सिंघ ने जत्थेदार अवतार सिंघ को स्मृति तस्करी, सम्मान पत्र, श्री साहिब और सिरोपाउ से सम्मानित किया। इससे पहले सचखंड श्री हरिमंदर साहिब से हजूरी रागी भाई रविंदर सिंघ और भाई राए सिंघ के जत्थों ने कीर्तन तथा अरदास भाई कुलविंदर सिंघ ने की, जबकि हुक्मनामा सिंघ साहिब ज्ञानी रघबीर सिंघ ने लिया। इस दौरान सिंघ साहिब ज्ञानी जगतार सिंघ, अतिरिक्त मुख्य ग्रंथी, ज्ञानी रवेल सिंघ, ज्ञानी मान सिंघ, ज्ञानी अमरजीत सिंघ, ज्ञानी जोगिंदर सिंघ वेदांती, बाबा हरनाम सिंघ खालसा मुखी दमदमी टकसाल, बाबा बलबीर सिंघ मुखी बुड्ढा दल ९६ करोड़ी, केवल सिंघ बादल, भाई रजिंदर सिंघ महिता, भाई मनजीत सिंघ, भाई राम सिंघ, गुरविंदरपाल सिंघ गोरा, अवतार सिंघ हित्त, परमजीत सिंघ राणा, चेयरमैन धर्म प्रचार कमेटी दिल्ली और मनजिंदर सिंघ सिरसा जनरल सचिव दिल्ली कमेटी, हरचरन सिंघ मुख्य सचिव, सचिव डॉ रूप सिंघ, स. मनजीत सिंघ सचिव, स. अवतार सिंघ सचिव के अतिरिक्त अधिकारीगण व भारी मात्रा में संगत उपस्थित थीं।

नित्यप्रति सिक्खों पर नसली हमले करना अभाग्यपूर्ण : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : ११ सितंबर : जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी ने अमेरिका में स. इंदरजीत सिंघ नामक व्यक्ति पर एक अंग्रेज टैक्सी ड्राइवर द्वारा शिकॉगो में नसली हमला बहुत दुखमयी और अभाग्यपूर्ण बताया है।

प्रेस विज्ञप्त में उन्होंने कहा कि इस अंग्रेज ने जान बूझकर इस सिक्ख को गालियां निकालीं, जख़्मी किया और फिर अपने मुलक वापिस जाने के लिए कहा। उन्होंने कहा कि इससे पहले भी अलग-अलग देशों में सिक्खों पर नसली हमले हुए हैं जो अभी तक रुकने का नाम नहीं लेते। अध्यक्ष साहिब ने कहा हर बार यही देखने-सुनने को मिलता है कि एक गोरे ने सिक्ख को लादेन समझकर गाली-गलोच किया तथा उसको गंभीर रूप से जख़्मी कर दिया। उन्होंने कहा कि सिक्ख एक विलक्षण और परोपकारी कौम है, जो मानवीय भलाई हेतु सदैव तत्पर रहती है। उन्होंने कहा कि सिक्ख जिस किसी मुल्क में भी जाते हैं उसकी तरक्की व खुशहाली के लिए भरपूर योगदान डालते हैं। उन्होंने अमेरिका की सरकार को दोषी को ढूंढकर फौरन कानून के अनुसार कार्यवाई करने के लिए कहा। उन्होंने अमेरिका की सिक्ख जत्थेबंदियों को भी अपील की है कि वो वहां की सरकार को सिक्ख धर्म के बारे में विस्तारपूर्वक जानकारी दें ताकि जो नित्यप्रति होने वाले नसली हमलों से निज़ात पाई जा सके।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-१०-२०१५